साहित्य संगम संस्थान

गुरू पूर्णिमा

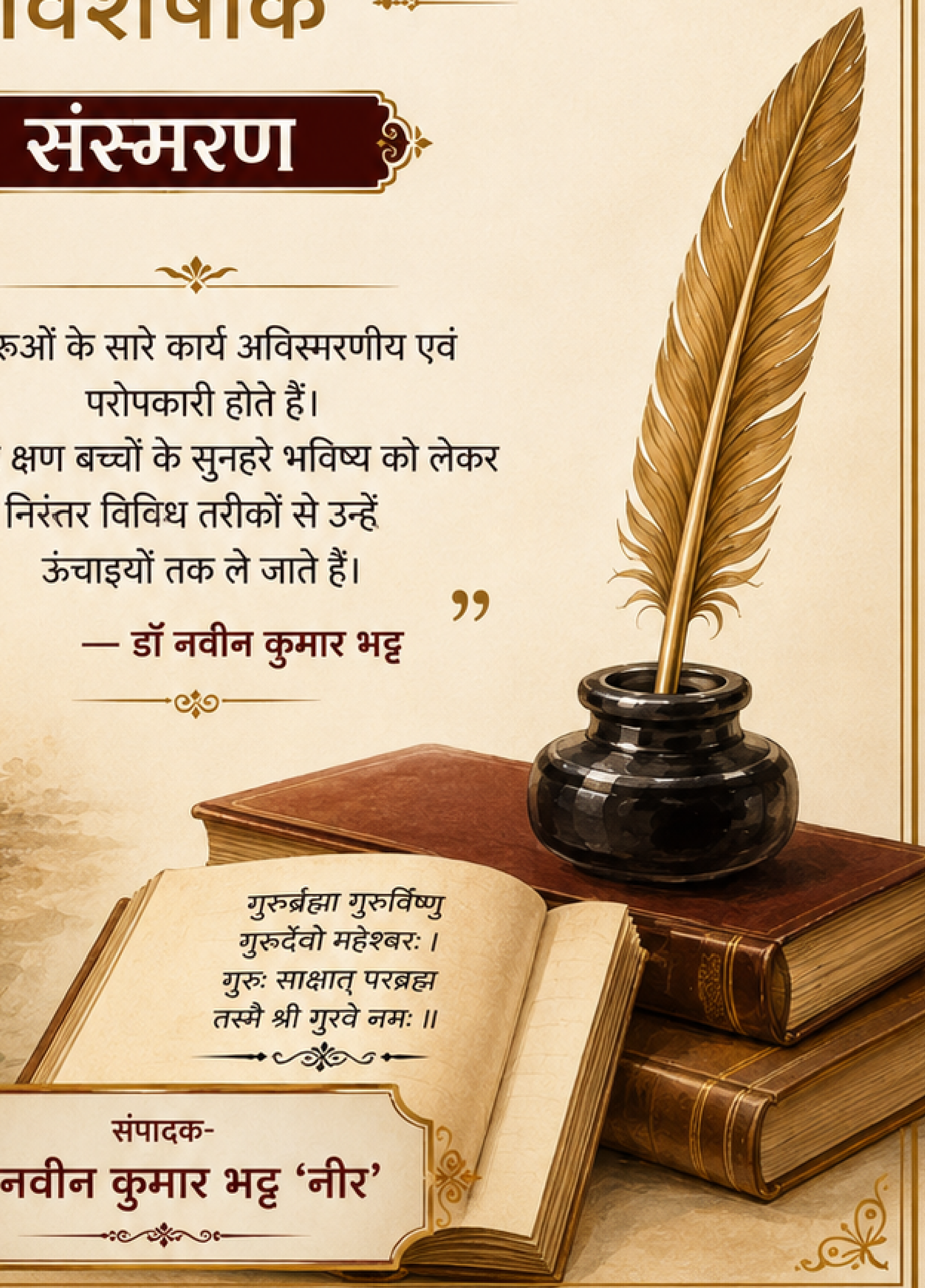
विशेषांक

संस्मरण



"गुरूओं के सारे कार्य अविस्मरणीय एवं
परोपकारी होते हैं।
वे हर क्षण बच्चों के सुनहरे भविष्य को लेकर
निरंतर विविध तरीकों से उन्हें
ऊंचाइयों तक ले जाते हैं।"

— डॉ नवीन कुमार भट्ट



संपादक-
डॉ नवीन कुमार भट्ट 'नीर'

विवरणिका

।। अध्यक्षीय ।।

'साहित्य संगम संस्थान' द्वारा प्रकाशित 'गुरु पूर्णिमा विशेषांक–2026' के अंतर्गत मौलिक संस्मरणों का यह संकलन अत्यंत सराहनीय एवं अभिनंदनीय प्रयास है। इसके सफल संयोजन एवं संपादन हेतु अनुज डॉ. नवीन कुमार भट्ट 'नीर' तथा सभी सहभागी रचनाकार साधुवाद के पात्र हैं।

शास्त्रीय एवं वैदिक सिद्धांत के अनुसार "तमसो मा ज्योतिर्गमय" ही गुरु-तत्व का मूल आधार है। वेदों में गुरु किसी नश्वर देह या व्यक्ति-विशेष का नाम नहीं, बल्कि सत्य, ज्ञान, विवेक और आत्मप्रकाश का प्रतीक है। श्रद्धा के अतिरेक में ज्ञान को छोड़कर व्यक्ति-पूजा करना ही गुरुडम तथा अंधविश्वास को जन्म देता है। सच्चा गुरु वही है जो शिष्य को व्यक्ति-पूजा से मुक्त कर सत्य, स्वाध्याय, तर्क और विद्या के पथ पर अग्रसर करे।

अतः सभी रचनाकारों एवं पाठकों से मेरा विनम्र आग्रह है कि व्यक्ति-पूजा (गुरुडम) का खंडन करते हुए वैदिक मूल्यों, ज्ञान और विद्या की प्रतिष्ठा को जीवन का आधार बनाएँ।

अनुज डॉ. नवीन कुमार भट्ट 'नीर' के कुशल संपादन में प्रकाशित इस 'गुरु पूर्णिमा विशेषांक–2026' के सफल प्रकाशन हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ एवं समस्त रचनाकारों को मंगलकामनाएँ।

राज वीर सिंह
अध्यक्ष
साहित्य संगम संस्थान

।। संपादकीय ।।

गुरु पूर्णिमा भारतीय संस्कृति में गुरु के प्रति श्रद्धा, सम्मान और कृतज्ञता व्यक्त करने का पावन पर्व है। इसी भावना को आत्मसात करते हुए साहित्य संगम संस्थान द्वारा "गुरु पूर्णिमा विशेषांक–2026" का प्रकाशन किया जा रहा है।

इस विशेषांक में संकलित प्रत्येक संस्मरण लेखक की मौलिक रचना है। इन संस्मरणों में लेखकों ने अपने जीवन में गुरुजनों से प्राप्त स्नेह, अनुशासन, प्रेरणा एवं मार्गदर्शन को आत्मीय भाव से शब्दों में अभिव्यक्त किया है। ये केवल स्मृतियों का संकलन नहीं, बल्कि भारतीय गुरु–शिष्य परंपरा के प्रति श्रद्धा, सम्मान और कृतज्ञता का जीवंत दस्तावेज़ हैं।

हमें विश्वास है कि यह विशेषांक पाठकों को अपने गुरुजनों का स्मरण करने, उनके प्रति आदर व्यक्त करने तथा शिक्षा, संस्कार और ज्ञान के महत्व को आत्मसात करने की प्रेरणा देगा। प्रत्येक संस्मरण जीवन के उन अमूल्य क्षणों का साक्षी है, जिन्होंने लेखकों के व्यक्तित्व एवं चिंतन को नई दिशा प्रदान की।

इस विशेषांक को सफल बनाने में सहयोग देने वाले सभी रचनाकारों, साहित्य संगम संस्थान के पदाधिकारियों तथा पाठकों के प्रति मैं हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। आप सभी के सहयोग और विश्वास से यह विनम्र साहित्यिक प्रयास साकार हो सका है।

आशा है कि "गुरु पूर्णिमा विशेषांक–2026" गुरु–शिष्य परंपरा के गौरव, भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों तथा ज्ञान की सतत परंपरा को जन-जन तक पहुँचाने में सार्थक भूमिका निभाएगा।

सादर।

— डॉ. नवीन कुमार भट्ट 'नीर'
संपादक – गुरु पूर्णिमा विशेषांक
साहित्य संगम संस्थान

॥ दो शब्द ॥

हिंदी साहित्य की गद्य विधा में लेखन करने वाले साहित्यकार, पद्य की अपेक्षा अपेक्षाकृत कम होते हैं। किंतु जब संस्मरण लेखन की बात आती है, तब उनकी लेखनी स्वतः ही संवेदनाओं और स्मृतियों के साथ प्रवाहमान हो उठती है।

गुरु पूर्णिमा के पावन अवसर पर प्रकाशित संस्मरणों का यह सुंदर संकलन साहित्य संगम संस्थान की एक उल्लेखनीय एवं अभिनव साहित्यिक उपलब्धि है। इस विशेषांक में संकलित प्रत्येक संस्मरण गुरु–शिष्य परंपरा के प्रति श्रद्धा, सम्मान और कृतज्ञता का सजीव दस्तावेज़ है।

डॉ. नवीन कुमार भट्ट 'नीर' के कुशल संपादन में प्रकाशित यह "गुरु पूर्णिमा विशेषांक–2026" निस्संदेह हिंदी साहित्य की अमूल्य धरोहर सिद्ध होगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह विशेषांक पाठकों को अपने गुरुजनों के प्रति श्रद्धा और सम्मान के भाव से जोड़ने के साथ-साथ भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण एवं संवर्धन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

इस सराहनीय साहित्यिक प्रयास के लिए संपादक, सभी रचनाकारों एवं साहित्य संगम संस्थान को हार्दिक शुभकामनाएँ।

— सरोज शुक्ला 'श्री'
राष्ट्रीय सह-अध्यक्षा
साहित्य संगम संस्थान

॥ शुभकामना संदेश ॥

साहित्यिक संवेदनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति के रूप में संस्मरण एक अत्यंत महत्वपूर्ण गद्य-विधा है। साहित्य संगम संस्थान के मुख्य मंच द्वारा प्रकाशित "गुरू पूर्णिमा विशेषांक-2026" में संस्थान के विद्वान रचनाकारों के प्रभावशाली संस्मरणों का अवलोकन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

इस विशेषांक में संकलित सभी संस्मरणों में रचनाकारों ने अपने गुरूजनों के प्रति श्रद्धा, समर्पण, प्रेम और कृतज्ञता को अत्यंत आत्मीयता, शब्द-सौष्ठव एवं भाव-सौदर्य के साथ अभिव्यक्त किया है। प्रत्येक संस्मरण केवल स्मृतियों का संकलन नहीं, बल्कि गुरू-शिष्य परंपरा की गौरवशाली सांस्कृतिक विरासत का जीवंत दस्तावेज़ है।

रचनाकारों ने गुरू के वास्तविक स्वरूप का अत्यंत सुंदर विवेचन किया है। गुरू वह चेतना है, जहाँ से ज्ञान, विवेक और प्रज्ञा का प्रकाश प्रस्फुटित होता है। गुरू के मार्गदर्शन से ही शिष्य के अंतर्मन में ज्ञान का दीप प्रज्वलित होता है और जीवन को सही दिशा प्राप्त होती है। इन संस्मरणों के माध्यम से यही दिव्य बोध सहज रूप में प्राप्त होता है।

मैं हृदय की गहराइयों से सभी रचनाकारों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ। मेरी मंगलकामना है कि "गुरू पूर्णिमा विशेषांक-2026" की ज्ञानरश्मियाँ प्रत्येक पाठक के जीवन को आलोकित करें तथा उनके उज्ज्वल भविष्य की पथप्रदर्शक बनें।

— डॉ. छगनलाल गर्ग 'विज्ञ'
2-डी-78, राजस्थान हाउसिंग बोर्ड
आकरा भट्टा, आबूरोड (सिरोही), राजस्थान

उमरिया वाले सरजी : एक शिक्षक नहीं, एक युग की जीवंत स्मृति

तस्मै श्री गुरुवे नमः।

जीवन की स्मृतियों में कुछ चेहरे समय के साथ धुंधले नहीं पड़ते, बल्कि समय के साथ और अधिक उज्ज्वल होते जाते हैं। वे केवल व्यक्ति नहीं रहते, बल्कि प्रेरणा, संस्कार और एक पूरे युग की पहचान बन जाते हैं। मेरे विद्यार्थी जीवन में ऐसे ही एक प्रेरणास्पद व्यक्तित्व थे—श्री टेकचंद रोहणी जी, जिन्हें हम सभी स्नेह और सम्मान से "उमरिया वाले सरजी" कहा करते थे।

जब मेरा प्रवेश शासकीय माध्यमिक शाला, मझगवाँ में हुआ, तब विद्यालय में आज जैसी सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं। न भव्य भवन थे और न आधुनिक संसाधन। बरसात के दिनों में रास्ते कीचड़ से भर जाते थे और विद्यालय पहुँचाना भी किसी चुनौती से कम नहीं होता था। किंतु इन कठिन परिस्थिर्थियों का प्रभाव कभी भी हमारे शिक्षकों के कर्तव्यबोध पर नहीं पड़ा। लालपुर (उमरिया) से प्रतिदिन साइकिल चलाकर विद्यालय पहुँचना, विद्यालय के समीप साइकिल खड़ी करना और हाथ में छाता लिए पैदल विद्यालय तक आना—यह दृश्य आज भी मेरी स्मृतियों में उतनी ही स्पष्टता से अंकित हैं। यह केवल एक शिक्षक का विद्यालय पहुँचना नहीं था, बल्कि अपने दाचित्व के प्रति उनकी अटूट निष्ठा का जीवंत उद्गाहरण

सरजी मुख्यतः गणित पढ़ाते थे। उस समय गणित अधिकांश विद्यार्थियों के लिए कठिन विषय माना जाता था, किंतु उनकी सरल, सहज और प्रभावशाली शिक्षण शैली ने इस कठिनाई को भी आनंदमय बना दिया। वे पहले स्वयं प्रश्न हल कराते, फिर उसी प्रकार के अनेक प्रश्न अभ्यास हेतु देते। गुहकार्य की नियमित जाँच उनके अनुशासन का अभिन्न अंग थी। उनकी डाँट में कठोरता नहीं, बल्कि स्नेह, उत्तरदावित्व और विद्यार्थियों के उज्ज्वल भविष्य की चिंता छिपी रहती थी। इसलिए विद्यार्थी उनसे भय भी करते थे और उतना ही सम्मान एवं प्रेम भी।

उनकी कक्षा में गणित केवल संख्याओं और सूत्रों का विषय नहीं रह जाता था, बल्कि आत्मविश्वास, धैर्य और तर्कशीलता का अभ्यास बन जाता था। आज पीछे मुड़कर देखता हूँ तो अनुभव होता है कि उन्होंने हमें केवल गणित नहीं सिखाया, बल्कि जीवन की कठिन समस्याओं का समाधान धैर्य, विवेक और आत्मविश्वास के साथ करना भी शिखाया।

जिस दिन किसी कारणवश वे विद्यालय नहीं आते थे, पूरा वातावरण जैसे फीका पड़ जाता था। और यदि वे दोपहर में अचानक विद्यालय पहुँच जाते, तो बच्चे तालियाँ बजाकर प्रसन्नता से कहते— "उमरिया वाले सर आ गए... उमरिया वाले सर आ गए।" विद्यार्थियों के मुख से निकला यह सहज संबोधन उनके प्रति अपार स्नेह और आत्मीयता का सबसे सुंदर प्रमाण था।

6 जुलाई 1993 को उन्होंने शासकीय माध्यमिक शाला, मझगवाँ में अपनी प्रथम नियुक्ति ग्रहण की। विद्यालय का प्रत्येक सांस्कृतिक कार्यक्रम—सरस्वती पुजा, राष्ट्रीय पर्व, बालसभा अथवा खेलकूद—उनके मार्गदर्शन में विशेष उत्साह और अनुशासन के साथ संपन्न होता था। वे केवल कार्यक्रमों का संचालन नहीं करते थे, बल्कि प्रत्येक विद्यार्थी को उसमें सहभागी बनाकर उसके व्यक्तित्व का विकास करते थे। उनके लिए विद्यालय नौकरी का स्थान नहीं, बल्कि संस्कारों की सजीव पाठशाला था।

विद्यालय परिसर में उनके हाथों लगाए गए आम के दो छोटे-से पौधे आज विशाल और फलदार वृक्ष बन चुके हैं। जब भी मैं अपने गाँव के उस विद्यालय में जाता हूँ, उन वृक्षों को देखकर अनायास ही सरजी की स्मृतियाँ ताजा हो उठती हैं। उनकी शीतल छावा और फलदायी शाखाएँ मानो उनके व्यक्तित्व का ही विस्तार प्रतीत होती हैं। ऐसा लगता है जैसे वे वृक्ष आज भी अपने रोपने वाले गुरु के स्नेहिल स्पर्श को संजोए हुए हैं।

उस समय विद्यालय केवल शिक्षा का केंद्र नहीं था, बल्कि पूरे गाँव का सांस्कृतिक हृदय था। राष्ट्रीय पर्वों पर प्रभात फेरियाँ निकलती थीं। गाँव के बुजुर्ग, अभिभावक और कलाकार बच्चों के साथ विद्यालय पहुँचते थे। लोकगीत, करमा नृत्य, देशभक्ति गीत और विविध सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ पूरे वातावरण को उत्सवमय बना देती थीं। विद्यालय की सफाई, सजावट, गोबर से कक्षाओं का लेपन और फूलों की मालाएँ बनाने तक के कार्यों में शिक्षक, विद्यार्थी और ग्रामीण समान उत्साह से भाग लेते थे। शिक्षा वास्तव में सामाजिक सहभागिता और सामूहिक संस्कार का उत्सव थी।

आज समय बदल गया है। विद्यालयों में आधुनिक भवन हैं, संसाधनों की कोई कमी नहीं और तकनीक भी उपलब्ध है; फिर भी वह आत्मीयता, अनुशासन, सांस्कृतिक जीवंतता और समाज से जुड़ाव कहीं न कहीं कम होता दिखाई देता है। यह परिवर्तन विकास का संकेत अवश्य हैं, किंतु उन मानवीय मूल्यों की भी याद दिलाता है जिन्हें हमारे जैसे शिक्षक अपने आचरण से जीते थे।

स्थानांतरण के बाद भी श्री टेकचंद रोहणी जी ने अपने पुराने विद्यालय और विद्यार्थियों से संबंध कभी नहीं तोड़ा। वर्षों तक प्रत्येक एक जनवरी को वे विद्यालय पहुँचकर बच्चों को टॉफियाँ बाँटते रहे। यह परंपरा उनके विद्यार्थियों के प्रति अटूट स्नेह और आत्मीय जुड़ाव का अनुपम उदाहरण है। शिक्षक और विद्यार्थी का ऐसा संबंध केवल कक्षा तक सीमित नहीं रहता, बल्कि जीवन भर साथ चलता है।

आज भी जब उनके विद्यार्थी उनसे मिलते हैं, तो सहज भाव से उनके चरण स्पर्श कर आशीर्वाद प्राप्त करते हैं और वे उसी आत्मीय मुस्कान के साथ सभी को अपना स्नेह प्रदान करते हैं। यही किसी शिक्षक की सबसे बड़ी उपलब्धि होती है—वह सम्मान, जो पद से नहीं, बल्कि व्यक्तित्व, समर्पण और संस्कारों से अर्जित होता है।

श्री टेकचंद रोहणी जी का जीवन सदैव निर्धन एवं वंचित बच्चों को निःशुल्क शिक्षा, उचित मार्गदर्शन और हर संभव सहयोग देने के संकल्प से प्रेरित रहा है। वे शिक्षा को केवल रोजगार का माध्यन नहीं, बल्कि समाज-निर्माण की सबसे प्रभावी शक्ति मानते हैं। यही कारण है कि वे आज भी विद्यार्थियों के लिए प्रेरणास्रोत और समाज के लिए आदर्श शिक्षक बने हुए हैं।

जब-जब मैं अपने विद्यार्थी जीवन की स्मृतियों के पने पलटता हूँ, "उमरिया वाले सरजी" का स्नेहमय व्यक्तित्व सबसे पहले आँखों के सामने उभर आता है। ऐसे गुरुजन केवल विद्यालय की पहचान नहीं होते, बल्कि पीढ़ियों के चरित्र का निर्माण करते हैं। समय बीत जाता है, भवन बदल जाते हैं, व्यवस्थाएँ बदल हैं, किंतु ऐसे शिक्षकों की स्मृतियाँ कभी पुरानी नहीं होतीं। वे अपने विद्यार्थियों के हृदय में सदैव जीवित रहते हैं।

ऐसे श्रद्धेय गुरु को शत्-शत् नमन।

— डॉ. नवीन कुमार भट्ट 'नीर'
जिला उमरिया, मध्यप्रदेश

विद्या -संस्मरण

गुरू पूर्णिमा आते ही मुझे यह किस्सा याद आ जाता है, बचपन में हम गुरू पूर्णिमा कितने धूमधाम से मनाते थे,...गुरू पूर्णिमा के दिन हम सभी स्कूल में शिक्षकों को कुछ ना कुछ गिफ्ट देकर उनका सम्मान करते थे।

एक बार की बात है मैं स्कूल में गुरू पूर्णिमा के दिन अपनी क्लास टीचर के लिए बहुत ही सुंदर सा पेन सेट लेकर के गई थी, लेकिन क्लासरूम से न जाने मेरा वह गिफ्ट कहां गुम हो गया, मैंने बहुत ढुंढा लेकिन मेरा वह गिफ्ट मुझे नहीं मिला.. मैंने सोचा ..न जाने किसने निकाल लिया था।

जैसे ही गुरू पूर्णिमा का प्रोग्राम शुरू हुआ, सभी बहुत खुश थे, लेकिन मेरी आंखों में आंसू थे.. मेरी क्लास टीचर मुझे बहुत प्यार करती थी.. जब वह क्लास में आई.. तो सभी ने फूल देकर उनका सम्मान व प्रणाम किया। लेकिन मेरे हाथ में कुछ भी नहीं था...जब मैंने उन्हें प्रणाम किया तो उन्होंने प्यार से मेरे सिर पर हाथ फिराया और बोली क्या बात है बेटा...... आज तुम इतनी सुस्त क्यूं हो..? उनका इतना बोलते ही मेरी आंखों से आंसु बहने लगे... उन्होंने मुझे चाँकलेट देकर चुप कराया और फिर बोली क्या बात है बेटा...

रो रो कर मेरा बुरा हाल था.. रोते-रोते जब मैंने उन्हें बताया कि मेरा गिफ्ट न जाने कहां गुम हो गया जो मैं उनके लिए लाई थी...

उन्होंने मुझे पेन सेट दिखाते हुए कहा...कहीं ये तो नहीं.. मैं खुशी से उछल पड़ी और बोली, हां-हां यही तो है... मैम आपकों कैसे मिला....ये तो मुझे क्लास रूम के गेट पर मिला.. मैंने तो सोचा किसी ने सरप्राइज गिफ्ट मेरे लिए रखा है... मेरी खुशी का ठिकाना नहीं था....जो गिफ्ट मैं अपनी मैम को देना चाहती थी, उन्हें स्वयं ही सरप्राइज के रूप में मिल गया...,।

मैंम ने मुझे खुशी से गले लगा लिया और बोली.... बेटा तुम लोग का प्रेम व स्नैह ही मेरे लिए सबसे बड़ा उपहार है। इसकी कोई जरूरत नहीं थी... फिर भी यदि तुम मेरे लिए लाई हो तो मैं इसे बहुत संभाल कर रखूंगी..।

और उन्होंने वह पेन सेट मुझे देकर कहा ठीक है.. अब तुम मुझे यह गिफ्ट दे सकती हो... लेकिन आगे से तुम लोग कोई गिफ्ट मेरे लिए नहीं लाओगे....। मेरी दी हुई शिक्षा .. व बड़ों का मान सम्मान.. ही मेरा सबसे बड़ा उपहार है। तुम लोग इसे सदैव याद रखना।

गुरू पूर्णिमा आते ही मुझे बचपन का ये वाकया आज भी याद आ जाता है। किस तरह हम सब उत्सुक रहते थे, गुरू पूर्णिमा का बेसब्री से इंतजार करते थे.. क्योंकि उस दिन हमें पढ़ना नहीं पड़ता था, खूब मौज मस्ती करते थे, और टीचर्स की डांट भी नहीं पड़ती थी... चाँकलेट भी खाने को मिलती थी।

बचपन के वो दिन भी क्या दिन थे...।

गुरू पूर्णिमा की आप सभी को हार्दिक बधाइयां

स्वरचित
रंजना बिनानी काव्या
गोलाघाट, असम

** संस्मरण **

जंगल की पगडंडियों से शिक्षा के शिखर तक

हमारा गाँव चारों ओर से घने जंगलों से घिरा हुआ, साधन-विहीन और अत्यंत पिछड़ा था। उस समय गाँव में केवल कक्षा चौथी तक ही प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था थाी। शिक्षा का वातावरण गुरुकुल की पुरानी मिली-जुली परंपरा से प्रभावित था, जहाँ गुरु केवल पढ़ाते ही नहीं थे, बल्कि संस्कारों का भी संचार करते थे।

आज भी स्मरण है कि उन दिनों हम भर्रे कलम की लकड़ी से लिखते थे। नीली, लाल और हरी स्याही की टिकिया पानी में घोलकर काँपियों में अक्षर उकेरते थे। स्लेट, चाक और पेंसिल हमारे अध्ययन के प्रमुख साधन थे। संसाधनों का अभाव था, लेकिन सीखने का उत्साह असीम था।

प्राथमिक शिक्षा पूरी करने के बाद आगे की पढ़ाई के लिए अपने गाँव से लगभग पाँच-छह किलोमीटर दूर बम्हनी बंजर कस्बे के मिडिल एवं हाई स्कूल जाना पड़ता था। वहाँ तक पहुँचने के लिए खेतों की मेड़ों पर बनी सँकरी पगडंडियों और ऊबड़-खाबड़ रास्तों से होकर गुजरना पड़ता था। बीच में बंजर नदी भी पड़ती थी, जिसे पार कर ही विद्यालय पहुँचना संभव होता था।

बरसात के दिनों में यह यात्रा किसी परीक्षा से कम नहीं होती थी। नदी में बाढ़ आने पर उसे पार करना असंभव हो जाता और हमें लौटकर गाँव आना पड़ता था। कई बार मित्रों के साथ जंगल में ही समय बिताकर शाम को घर लौट आते थे। उस समय पढ़ाई छूट जाने का दुख तो होता था, पर परिस्थितियाँ हमारे वश में नहीं थीं।

आज जब उन दिनों को याद करता हूँ तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं। शिक्षा प्राप्त करना किसी तपस्या से कम नहीं था। कठिनाइयों, अभावों और संघर्षी के बीच जो शिक्षा, संस्कार और संस्कृति हमें मिली, वही जीवन की सबसे बड़ी पूँजी सिद्ध हुई। उन्हीं अनुभवों ने हमें धैर्य, परिश्रम और संघर्ष का वास्तविक अर्थ सिखाया।

प्रस्तुतिः डॉ. मधुसूदन तिवारी
महाराजपुर, जिला मंडला (मध्यप्रदेश)
हाल मुकाम – मुंबई, महाराष्ट्र।

** संस्मरण **

गुरू पूर्णिमा : श्रद्धा और संस्कार का पर्व

गुरू पूर्णिमा का दिन मेरे जीवन के सबसे प्रेरणादायक और अविस्मरणीय दिनों में से एक रहा है। विद्यालय के दिनों में इस पावन पर्व की प्रतीक्षा पूरे वर्ष रहती थी। प्रातःकाल विद्यालय पहुँचते ही वातावरण श्रद्धा, भक्ति और उत्साह से भर उठता था। सरस्वती वंदना के साथ कार्यक्रम का शुभारंभ होता, गुरूजनों का सम्मान किया जाता और हम सभी विद्यार्थी पुष्प अर्पित कर उनके चरण स्पर्श कर आशीर्वाद प्राप्त करते थे।

आज भी वह क्षण स्मृतियों में सजीव है, जब मैंने अपने प्रिय गुरूजी को एक साधारण-सा पुष्पगुच्छ और स्वयं लिखी हुई कविता भेंट की थी। उन्होंने स्नेहपूर्वक मेरे सिर पर हाथ रखकर कहा— "ज्ञान तभी सार्थक है, जब उसमें विनम्रता और संस्कार जुड़े हों।" उनके ये शब्द मेरे जीवन की अमूल्य धरोहर बन गए और आज भी हर कदम पर मेरा मार्गदर्शन करते हैं।

समय के साथ विद्यालय छूटा, अनेक गुरू मिले और जीवन ने भी बहुत कुछ सिखाया। तब अनुभव हुआ कि गुरू केवल पाठयपुस्तकों का ज्ञान देने वाला व्यक्ति नहीं होता, बल्कि वह अज्ञान के अंधकार से निकालकर सत्य, सदाचार और सफलता का मार्ग दिखाने वाला प्रकाश-स्तंभ होता है। माता-पिता, शिक्षक और जीवन के अनुभव—सभी किसी में हमारे गुरू हैं।

आज गुरू पूर्णिमा के पावन अवसर पर मैं अपने समस्त गुरूजनों के प्रति श्रद्धा, कृतज्ञता और सम्मान भाव से नमन करता हूँ। उनके दिए हुए संस्कार, अनुशासन और प्रेरणा ही मेरे व्यक्तित्व की सबसे बड़ी पूँजी हैं। यह पर्व हमें विनम्रता, कृतज्ञता और ज्ञान के प्रति समर्पण का संदेश देता है तथा जीवनभर गुरू-ऋण का स्मरण कर उसे कर्मों से चुकाने की प्रेरणा प्रदान करता है।

प्रस्तुतिः
इंजी. अनिल जैन
(स्वरचित – मौलिक)

** संस्मरण **

गुरु ही गुरु

गुरु से ही ज्ञान मिलता है और गुरु से ही जीवन को सही दिशा मिलती है। गुरु वह प्रकाश-स्तंभ है, जो अज्ञान के अंधकार को दूर कर व्यक्तित्व का निर्माण करता है। शिक्षक के रूप में गुरु का स्थान हमारे जीवन में सर्वोपरि है। प्रस्तुत संस्मरण मेरे जीवन की एक सच्ची घटना पर आधारित है, जिसने गुरु-शिष्य संबंध की गरिमा को और अधिक गहरा कर दिया।

आगे की शिक्षा पूर्ण कर तकनीकी क्षेत्र में जाने से पहले मैंने राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, बारां में कुछ समय तक शिक्षक के रूप में कार्य किया। एक दिन भीषण गर्मी थी। बिजली भी नहीं थी, इसलिए मैं विद्यालय परिसर में एक पेड़ की छाँव में चबूतरे पर बैठकर अखबार पढ़ रहा था। तभी एक वृद्ध सज्जन ने विनम्र स्वर में पूछा, “भैया, क्या मैं थोड़ी देर यहाँ बैठ जाऊँ?” मैंने उन्हें बैठने का आग्रह किया।

कुछ देर बाद उन्होंने पानी माँगा। जब मैं उन्हें पानी देने गया तो उनके चेहरे पर निगाह पड़ते ही कुछ परिचित-सा आभास हुआ। मैंने पूछा, “क्या आपका नाम छोगालाल जी है?” उन्होंने आश्चर्य से मेरी ओर देखा और उत्तर दिया, “हाँ, लेकिन तुम्हें कैसे पता?” मैंने फिर पूछा, “क्या आप कभी मांगरोल के प्राथमिक विद्यालय में प्रधानाध्यापक थे?” उनका आश्चर्य और बढ़ गया।

अब मैं स्वयं को रोक न सका। उनके चरणों में झुककर बोला, “गुरुजी, मैंने आपकी छत्रछाया में ही प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की है। आपकी बाल सभा की प्रेरणादायी बातें आज भी मेरे जीवन का पथ-प्रदर्शन करती हैं।”

जब मैंने बताया कि मैं भी शिक्षक हूँ, तो वे मुस्कराकर बोले, “आज एक गुरु का दूसरे गुरु से मिलन हो रहा है।” मैंने विनम्रता से कहा, “गुरुदेव, आपके सामने मैं आज भी शिष्य ही हूँ। जीवनभर शिष्य बने रहना चाहता हूँ, ताकि जहाँ से भी कुछ अच्छा सीखने को मिले, उसे विनम्रता से ग्रहण करता रहूँ।”

वे मुझे गले लगाने के लिए आगे बढ़े, किंतु मैं पुनः उनके चरण स्पर्श करने झुक गया। उन्होंने तुरंत मुझे उठाकर अपने हृदय से लगा लिया। उस क्षण कुछ नमी उनकी आँखों में थी और कुछ मेरी आँखों में। यही मेरे जीवन की सबसे अमूल्य गुरु-दक्षिणा और अविस्मरणीय गुरु-आशीर्वाद है।

प्रस्तुतिः
सतीश गुप्ता पोरवाल
जयपुर
(स्वरचित एवं मौलिक)

** संस्मरण **

गुरु पूर्णिमा पर गुरु का सम्मान

स्कूल ,कॉलेज के दिनों पढ़ाई की शिक्षा के साथ बच्चों ने अपने गुरु का आदर सम्मान भी करना चाहिए। ।ज्ञान के साथ ही आदर सम्मान जुड़ा होता है। जिसे हम सभी शिक्षण के दौरान प्राप्त करते है। नैतिक शिक्षा अपने आप में बहुत महत्व रखती है ।कुछ गलती हो तो लोग बागइ ताना मार ही देते है -क्या यही सिखाया था। गुरु के लिए हर बच्चा कोहिनूर ही होता है। पढ़ाई खूब मन लगा कर करें। गुरु के अलावा अपने से बड़ों का सम्मान करना भी सीखे। यही सीख जीवन पर्यन्त तक बेहतर जीवन के लिए मूलमंत्र सिद्धदे होगी ।बड़ो का मान सम्मान करना तो बच्चे भूलते जा रहे है। वे इलेक्ट्रानिक दुनिया के सम्मोहन में बंधे से जा चुके है।

स्कूली जीवन की अनगिनत यादों को गुरुपूर्णिमा परआज जब याद करते है तो बचपन की यादों में खो कर मुस्कान चेहरे पर आ जाती है ।गुरु अपने ज्ञान और अनुभव को सभी विधार्थियों में बाटते और दी गई शिक्षा को हम्म सभी ध्याने पूर्वक पढ़ते और समझते थे। गुरु जब कक्षा में आते तो सब खड़े होकर उनका अभिवादन करते और जब परिवार के साथ बाजार में जाते और रास्ते में गुरु मिल जाए तो पापा-मम्मी के संग गुरु को नमस्कार करते ,यही आदर -सम्मान की भावना गुरु से हमसे स्कूल जीवन में सीखी थी जो आज हमारे दिल में बड़े होने एवं बड़े पद पर विधमान होने पर सजीव है।

चुनाव का वाक्या याद आता है। जब मुझे पीठासीन अधिकारी पद और मेरे गुरु जिन्होंने मुझे पढ़ाया था उन्हें मेरे अंडर में पोलिंग अधिकारी नंबर १ पर नियुक्त किया गया ।चुनाव में और भी अधिकारी मेरी चुनाव संबंधी सहायता हेतु मेरे साथ थे। चुनाव सामग्री पद के हिसाब से संभालने का दावित्व था हम सभी अपनी -अपनी सभी चुनाव सामग्री लेकर बस की और चलने लगे ।मैने देखा की ये तो अपने गुरुजी है। जिन्होंने बचपन में मुझे पढ़ाया था। वे अब बुजुर्ग हो चुके थे और उनसे उनकी सभी सामग्री और ख्वयं का भारी बेग भी उठाए नहीं जा रहा था ।मैने गुरुजी से कहा - "सर ये सब आप मुझे दीजिए में लेकर चुलता हूँ"। गुरुजी ने कहा कि -" आप तो हमारे अधिकारी है आप से कैसे उठवा सकता हूँ" मैने कहा आपने तो हमे शिक्षा के साथ सिखाया था "आदर सम्मान का पाठ" आप की शिक्षा के बदौलत ही आज बड़े पद पर नौकरी कर रहा हूँ ,ये क्या कम है ? मैने ,मेरे गुरु की चुनावी सामग्री और बैना लिए। गुरु की आँखों में आँसू छलक पड़े और मेरे मन में साहस का हौसला भर गया।

आदरणीय मेरे गुरु आज भी मेरे साथ है जिनसे ज्ञान और अनुभव अब भी प्राप्त करता रहूंगा। यही मेरी गुरु सेवा और सहायता अच्छे कार्य हेतु सदैव जीवन भर मेरे साथ रहेगी व प्रेरणा देती रहेगी।

संजय वर्मा 'दृष्टि'
125 शहीद भगतसिंह मार्ग
मनावर जिला धार मप्र

#संस्मरण

गुरुपौर्णिमा

दिव्यता का दिन है यह ...
मन ही मन गुरु के प्रति नतमस्तक हो जाते हैं हम सभी

गुरूपौर्णिमा आते ही मुझे अपना बचपन याद आता है जब हम पाठशाला मे अपने गुरुओ के लिए अपने हाथो से बनाकर कार्ड लेके जाते थे ...

उनके लिये घर मे लगे हुए गुलाब के फूल या घर मे लगे हुए कोई भी फुल या घर मे बनाया हुआ कोई रुमाल या एक कढ़ाई भेट स्वरूप देते थे और हमारे मन मे अपने गुरू के प्रति बहुत ही श्रद्धा थी जो आज भी वैसे ही है...

मेरे पिताजी भी एक शिक्षक थे, प्राचार्य थे और मेरी माता और पिता ये दोनो मेरे पहले गुरु है और उन्होंने ही मुझे गुरु का सन्मान करना सिखाया... मुझे निबंध प्रतियोगिता मे प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ था और समारोह मे सभी शालाओ के शिक्षक और शहर के गणमान्य लोक आये हुए थे

मैं समारोह की गंभीरता को न समझते हुए अपनी एक दोस्त के साथ बातो मे लगी थी कि मेरे पिताजी ने किसी को भेज कर मुझे दो मिनिट के लिए अपने पास बुलाया और और धीरे से बताया की गुरूओ के सामने अधिक बात नही करते यहाँ सभी शिक्षक तुम्हारे गुरु है.... अपना व्यवहार संयत रखो भले ही यह कक्षा नही है लेकिन शिक्षा से संबंधित समारोह है अपना व्यवहार हमेशा विनम्र और शांत होना चाहिये ...

और उसके बाद से हर परिस्थिती मे योग्य व्यवहार यह मेरे लिये मेरे पापा मेरे गुरु की सीख है...

आज गुरूपौर्णिमा पर अपने पिताजी को याद करती हुं की वो आजीवन हमारे साथ रहे पथप्रदर्शक रहे और उनकी सीख आज भी अंधेरे मे प्रकाश बनकर सामने आती है..

अध्यात्मिक गुरु मे दत्तगुरु और साईबाबा
मेरे गुरु है..
हर बार कृपा मिली अकस्मात आनंद मिला सब ईश्वर और गुरु की कृपा है...

मंजूषा किंजवडेकर
महाराष्ट्र इकाई
नागपुर महाराष्ट्र

** संस्मरण **

गुरु पूर्णिमा याने गुरु का दिन

जब भी गुरू पूर्णिमा आता है, मुझे मेरा बचपन याद आ जाता है, कैसे मैं इस दिन के लिए एक्साइमेंट हो जाती थी, क्योंकि मेरे दादा दादी, नाना नानी मेरे माता-पिता सभी गुरू पूर्णिमा के दिन बहुत सारे पकवान, खाना कपड़े लाना सभी तैयारियां में लगे रहते थे, मैंने मां से पूछा यह सब तैयारियां किस लिए हो रही है।

मां ने बड़े प्यार से मुझे अपनी गोद में लेकर इस गुरू पूर्णिमा का महत्व समझाने लगी कहने लगी बेटी जीवन माता-पिता और गुरू का महत्वपूर्ण स्थान होता है, भले हम सब कहते हैं की माता पिता प्रथम गुरू होते हैं, यह बात सच हैं, मगर जीवन में महत्वपूर्ण ज्ञान हमें गुरू से मिलता है, और हम सब को जीवन में गुरु जरूर बनाना चाहिए ताकि हमारे जीवन में उनका हाथ सदैव हमारे सर पर रहें, इतना कहकर मां फिर अपने काम में लग गयी फिर कुछ देर बाद हमारे पिता जी, चाचा जी दादा जी के साथ उनके उनके गुरू हमारे घर पर आए, और हमारे घर में हमारी मां चाची दादी सभी लोगों ने उनको आदर सत्कार के साथ उनको बिठाया फिर भी कुछ मुझे समझ नही आ रहा था कहते हैं न बच्चों में सहन शक्ति नही होती और न ज्यादा समझ मैंने फिर दादी से जाकर पूछा दादी गुरु तो स्कूल में रहते हैं मगर आज हमारे घर पर दादी ने बहुत ही सुंन्दर तरीके से समझाया और कहां अभी चुपचाप हम बड़े जो कहे उसे करो और ध्यान से देखो की हम क्या कर रहे हैं।

हम सब बच्चे एक जगह बैठकर चुपचाप देखने लगे हमारे सभी बड़े सबसे पहले सभी गुरू जनों के पैरों के नीचे सुंदर थाली रखकर लोटे से उनका पैर धुलाने लगे फिर सुंदर वस्त्र से पैरों को साफ करके सभी गुरू जनों को सुंदर धरा पर आसन पर बिठाकर तिलक लगाकर आरती उताकर चरण वंदन कर भोजन खिलाया फिर भोजन के बाद सुंदर सुंदर वस्त्र देकर और बहुत सारी चीजें देकरत्त उनका आवभगत कर उनके चरण वंदन कर आशीर्वाद लेकर उनको विदा किया।

उसके बाद हम सभी बच्चों को बिठाकर जीवन में गुरू की क्या महत्व है समझाया।

मगर मैं जब पहली बार स्कूल गयी तो सबसे पहले मैं अपने गुरू के चरणों को प्रणाम किया, और मुझे याद है मेरे गुरू जी का नाम कन्हैया लाल उन्होंने मुझे अपने चरणों से उठाकर बहुत खुश होकर आशीर्वाद देते हुए उनकी आंखों में आंसू आ गये। मुझे उतना ध्यान तो नही की वो किस वजह से रो रहे थे, मेरी निगाहें मेरी दादी की तरफ थी।

अब वो इस दुनिया में नही है मेरे गुरू जी मगर उनका प्यार आशीर्वाद समय में समय-समय पर डांट आज भी हैं मेरे पास यादों की धरोहर बनकर

🙏 **सरोज सिंह राजपूत ठाकुर**
12 बिलासपुर छत्तीसगढ़

* गुरु के स्नेह की छाया में *

एक भावपूर्ण संस्मरण....

जीवन की लंबी यात्रा में अनेक चेहरे मिलते हैं, अनेक संबंध बनते हैं, पर कुछ व्यक्तित्व ऐसे होते हैं जो समय की धूल से कभी धुँधले नहीं पड़ते। वे स्मृतियों के आकाश में ध्रुवतारे की तरह सदैव प्रकाशित रहते हैं। मेरे लिए मेरे गुरुजन ऐसे ही प्रकाशपुंज हैं, जिनकी दी हुई सीख, स्नेह और प्रेरणा आज भी मेरे जीवन का मार्ग आलोकित करती है।

जब मैं कक्षा पाँच में थी, तब हमारे विद्यालय में गुप्ता मैडम गणित पढ़ाया करती थीं। वे अनुशासनप्रिय होने के साथ-साथ अत्यंत स्नेहमयी भी थीं। मैं कक्षा चार तक उत्तर प्रदेश में पढ़ चुकी थी। वहाँ की पढ़ाई के कारण गणित पर मेरी पकड़ अपने नए विद्यालय के अधिकांश विद्यार्थियों की अपेक्षा कुछ अधिक थी। यह बात गुप्ता मैडम ने बहुत जल्दी पहचान ली।

अक्सर वे मुझे अपने पास बुलाकर कोई नया प्रश्न समझातीं और फिर मुस्कुराते हुए कहतीं— **"अब तुम पूरी कक्षा को समझाओ।"** उस समय मैं यह नहीं समझती थी कि वे केवल गणित नहीं सिखा रहीं, बल्कि मेरे भीतर आत्मविश्वास, नेतृत्व और अभिव्यक्ति का बीज भी बो रही हैं।

एक छोटी-सी बच्ची के लिए अपनी पूरी कक्षा के सामने खड़े होकर पढ़ाना किसी बड़े सम्मान से कम नहीं था। जब सहपाठी मेरी ओर प्रश्न लेकर आते और मैं उन्हें समझा पाती, तब मन में एक अनोखा आत्मविश्वास जन्म लेता। यदि कभी मैं किसी प्रश्न में उलझ जाती, तो गुप्ता मैडम कभी डाँटती नहीं थीं। वे धैर्यपूर्वक मेरे पास बैठतीं, फिर से समझातीं और कहतीं— **"गलती करना बुरा नहीं, सीखना छोड़ देना बुरा है।"** उनके इन सरल शब्दों ने मुझे जीवन भर के लिए सीखने का साहस दिया।

उसी विद्यालय में मेरी हिंदी की शिक्षिका भी थीं। उनका व्यक्तित्व बिल्कुल अलग था—ममता से भरा, मधुर और प्रेरणादायी। वे केवल व्याकरण या पाठ नहीं पढ़ाती थीं, बल्कि शब्दों की आत्मा से परिचय कराती थीं। शायद वही संस्कार थे, जिन्होंने आगे चलकर साहित्य के प्रति मेरे मन में गहरा अनुराग जगाया। आज जब मैं लेखन और काव्य-सृजन करती हूँ, तो लगता है कि उन शब्दों के पहले बीज मेरी हिंदी मैडम ने ही मेरे मन की मिट्टी में रोपे थे।



समय बीत गया। विद्यालय छूट गया। जीवन अपनी गति से आगे बढ़ता रहा। शिक्षा पूरी हुई, विवाह हुआ और मैं अपने नए जीवन में व्यस्त हो गई। किंतु नियति ने एक ऐसा सुंदर संयोग रचा, जिसकी मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी। विवाह के बाद मेरा घर उसी मोहल्ले में बना, जहाँ मेरी हिंदी की मैडम रहती थीं।

पहली बार जब उन्होंने मुझे देखा, तो उनके चेहरे पर वही पुराना अपनापन लौट आया। वर्षों का अंतराल जैसे एक क्षण में मिट गया। जब भी कोई परिचित मिलता, वे बड़े गर्व से मेरा परिचय कराते हुए कहतीं— “यह मेरी छात्रा है। बचपन से ही बहुत होनहार थी। मुझे तभी पता था कि यह आगे जाकर कुछ अलग करेगी।”

उनके मुख से निकले ये शब्द मेरे लिए किसी पुरस्कार, किसी सम्मान-पत्र या किसी उपाधि से कहीं अधिक मूल्यवान थे। संसार का सबसे बड़ा सम्मान शायद वही होता है, जब आपका गुरु आपकी उपलब्धियों पर गर्व करे। उस क्षण मुझे लगा कि विद्यार्थी कभी अपने गुरु के हृदय से दूर नहीं होता। वर्षों बाद भी यदि गुरु अपने शिष्य को उसी स्नेह से पहचान ले, तो समझिए शिक्षा का संबंध केवल कक्षा तक सीमित नहीं था; वह आत्मा से आत्मा का संबंध बन चुका था।

आज जब मैं अपने जीवन की उपलब्धियों, साहित्यिक यात्राओं और सामाजिक कार्यों पर दृष्टि डालती हूँ, तो बार-बार यही अनुभव होता है कि इन सबकी नींव मेरे गुरुजनों के विश्वास ने रखी थी। उन्होंने केवल पाठ्यक्रम नहीं पढ़ाया; उन्होंने मुझे स्वयं पर विश्वास करना सिखाया। उन्होंने केवल प्रश्न हल करना नहीं सिखाया; उन्होंने जीवन की कठिनाइयों का सामना करना सिखाया। उन्होंने केवल भाषा नहीं सिखाई; उन्होंने विचारों को शब्द देना सिखाया।

गुरू का दिया हुआ ज्ञान समय के साथ पुराना नहीं होता, बल्कि जीवन के प्रत्येक पड़ाव पर नए अर्थ लेकर सामने आता है। आज भी जब किसी मंच पर बोलती हूँ, जब कोई कविता लिखती हूँ, जब किसी विद्यार्थी का मार्गदर्शन करती हूँ, तब अनायास ही अपने गुरूजनों की छवि स्मरण हो आती है। ऐसा लगता है मानो उनके आशीर्वाद का अदृश्य हाथ आज भी मेरे सिर पर है।

मैं स्वयं को अत्यंत सौभाग्यशाली मानती हूँ कि मुझे ऐसे गुरू मिले, जिन्होंने मेरी छोटी-सी प्रतिभा को पहचानकर उसे प्रोत्साहन दिया, उसे दिशा दी और उसे उड़ान दी। यदि उस समय उनका विश्वास, उनका स्नेह और उनका मार्गदर्शन न मिला होता, तो शायद मेरा व्यक्तित्व भी आज इतना समृद्ध न होता।

एक और गुरू माँ थी,जिन्होंने नाइंथ क्लास में मेरा बहुत साथ दिया, पर संस्मरण बड़ा हो जाएगा। इसलिए उनकी बात फिर कभी करूंगी।

मेरे लिए गुरू केवल शिक्षक नहीं हैं; वे मेरे व्यक्तित्व के शिल्पकार हैं। मैं अपनी उन तीनों आदरणीय शिक्षिकाओं के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम अर्पित करती हूँ। उनकी दी हुई शिक्षा, उनका विश्वास और उनका वात्सल्य मेरे जीवन की सबसे अमूल्य निधि है।

सच ही कहा गया है—

"गुरू ज्ञान नहीं, जीवन का आलोक देते हैं।
वे केवल पढ़ाते नहीं, व्यक्तित्व गढ़ते हैं।
उनकी एक स्नेहभरी दृष्टि शिष्य के भीतर छिपी संभावनाओं को
पहचानकर उसे नई ऊँचाइयों तक पहुँचा देती है।"

आज भी जब बचपन की गलियों से स्मृतियाँ होकर गुजरती हैं, तो सबसे पहले उन्हीं तीनों गुरू-माताओं के स्नेहिल चेहरे आँखों के सामने आ खड़े होते हैं। मन श्रद्धा से भर उठता है और हृदय से सहज ही यही प्रार्थना निकलती है—

"हे गुरूवर! आपका दिया हुआ ज्ञान, आपका विश्वास और आपका
आशीर्वाद मेरे जीवन का सबसे बड़ा धन है। मैं जहाँ भी रहूँ,
आपके संस्कारों की ज्योति सदैव मेरे पथ को प्रकाशित करती रहे।"

डॉ भावना दीक्षित ज्ञानश्री
जबलपुर मध्यप्रदेश

गुरु पूर्णिमा की आप सभी को हार्दिक शुभकामनाएं

गुरू ज्ञान का भंडार है , गुरू ज्ञान का वह प्रकाश है जो अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करते हैं , हमें याद है जब हम पढ़ते थे तो हम टीचर की बात हमेशा मानते थे , उनका बड़ा सम्मान करते थे , उनकी कहीं हुई बात हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव डालती थी , गुरू पूर्णिमा के दिन हम अपने टीचर को अपने हाथों द्वारा ग्रीटिंग कार्ड बनाकर देते थे , और वह बहुत खुश हो जाते थे ।

बात उस समय की है जब हम सिक्स क्लास में थे , और एक यंग टीचर हमें पढ़ाने आई उस समय अहलाद मैडम की उम्र काफी कम थी वह हमें पर्यावरण पढ़ाती थी । मैडम का लड़कियों के प्रति काफी भावनात्मक लगाव था । बड़े प्रेम से समझाती सभी को , गुरू पूर्णिमा के दिन सबसे ज्यादा गिफ्ट और ग्रीटिंग कार्ड अहलाद मैडम को मिलते थे , उन्हें बच्चे काफी पसंद करते थे , मैडम का कई बार ट्रांसफर हुआ किंतु बच्चों के प्रति उनका भावनात्मक लगाव और स्टाफ के प्रति कुशल व्यवहार को देखते हुए उनका ट्रांसफर रोक दिया जाता ।

मेरा प्राइबेट में फाइनल ईयर चल रहा था , तो मैंने गवर्नमेंट स्कूल में अडॉप्ट टीचर जॉइनिंग कर ली , वहां मेरी मुलाकात अहलाद मैडम से हुई । जितनी मैं खुश थी उससे दुगुनी खुशी मैडम के चेहरे पर नजर आ रही थी , उन्होंने खुश होकर दूसरी मैडम को बताते हुए कहा , कि यह मेरी बहुत अच्छी स्ट्रडेंट है । और उन्होंने मुझसे खुश होकर कहा कि एक गुरू के लिए इससे खुशनुमा पल क्या होगा जब उनकी शिष्या उनके साथ बरावरी से खड़ी हो मैं बहुत खुश हूं मुझे बहुत गर्व है कि मेरी पढ़ाई हुई छात्रा आज मेरे सामने योग्य बनकर खड़ी है ।

मेरे लिए भी वह बहुत खुशनुमा पल था जिस टीचर ने मुझे पढ़ाई मुझे उनके साथ काम करने का मौका मिल रहा है गुरू पूर्णिमा के दिन जब भी मैं उन्हें प्रणाम करती वह मुस्कुरा कर कहती गुरू गुड़ बन गया और चेला शक्कर बन आगे निकल गया तुम सदैव उन्नति के रास्ते पर चलती रहो यही मेरी शुभकामनाएं उनका प्रेम भरा आशीर्वाद मुझे सदा उनसे जोड़े रखता है जब भी मायके जाना होता है मैं मैडम से मिलने जरूर जाती हूं उनसे मिलकर मुझे बहुत खुशी होती है गुरू की शरण मिल जाए तो छात्र का जीवन धन्य हो जाता है ।

शिल्पा दुबे
गोंदिया महाराष्ट्र

मेरे गुरुजी

गुरु की श्रेणी में केवल विद्यालय के शिक्षक ही नहीं आते, बल्कि माता-पिता भी हमारे प्रथम गुरु होते हैं। जीवन में अनेक गुरुजनों का सान्निध्य मिला, जिन्होंने प्रत्यक्ष और परोक्ष रुप से मेरे व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मेरा बचपन अत्यंत स्नेहिल और अनुशासित पारिवारिक वातावरम में बीता। हम सभी बहनें और इकलौते छोटे भाई के साथ ऐसे संस्कारों में पले-बढ़े, जहाँ अनुशासन, विनम्रता और आत्मविश्वास स्वतः ही जीवन का हिस्सा बनते चले गए। नौवीं कक्षा से ही मैं छात्रावास में रहने लगी। उसी दौरान महादेवी वर्मा और सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की रचनाओं ने भी मेरे मन और व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव डाला।

दसवीं कक्षा में छात्रावास में रहते हुए हमारी विज्ञान शिक्षिका आदरणीया अरुणा दीदी ने मुझे विज्ञान प्रयोगशाला की पूरी जिम्मेदारी सौंप दी। उन्होंने स्नेहपूर्वक कहा— "तुम बहुत जिम्मेदार शिष्या हो। तुम्हारे भीतर आत्मबल और आत्मविश्वास है। तुम मृदुभाषी, शांत, सौम्य और विनम्र स्वभाव की हो। तुम्हारे व्यक्तित्व में सादगी है, अहंकार नहीं। इन गुणों को जीवन भर बनाए रखना और निरंतर विकसित करना।"

उनके ये शब्द मेरे लिए उस समय अप्रत्याशित थे। मैंने कभी स्वयं के बारे में इस दृष्टि से सोचा भी नहीं था। उस समय तो उनकी बातें सुनकर मन प्रसन्न अवश्य हुआ, पर धीरे-धीरे वे मेरे अवचेतन मन में गहराई से उतर गईं। अरुणा दीदी का स्नेहिल व्यवहार, मधुर वाणी और सहज शिक्षण शैली मुझे सदैव आकर्षित करती थी। वे कभी ऊँची आवाज में नहीं बोलती थीं। पढ़ाते-पढ़ाते ही जीवन के मूल्य भी सहजता से सिखा देती थीं।

समय बीतता गया। आगे चलकर जब मुझे स्वयं अध्यापन का अवसर मिला, तब अनजाने ही मैंने भी अपने विद्यार्थियों के साथ वही व्यवहार अपनाया। मेरा प्रयास रहता कि वे कक्षा में ही विषय को पूरी तरह समझ लें, ताकि उन्हें अनावश्यक कठिनाई न उठानी पड़े। आज पीछे मुड़कर देखती हूँ तो अनुभव होता है कि यह सब अरुणा दीदी के व्यक्तित्व की ही अमूल्य देन थी।

आज वे इस संसार में नहीं हैं, किंतु उनकी सीख, उनका स्नेह और उनके संस्कार आज भी मेरे व्यक्तित्व में जीवंत हैं। अब महसूस होता है कि सच्चा गुरु वही होता है, जो अपने शिष्य की क्षमता को पहचानकर उसे निरंतर आगे बढ़ने की प्रेरणा देता रहे।

अपने शिक्षक जीवन में मैंने भी उन्हीं के पदचिह्नों पर चलने का प्रयास किया। विद्यार्थियों में अनुशासन, आत्मविश्वास और उत्कृष्टता का भाव जगाने का भरसक प्रयत्न किया। यह मेरे लिए अत्यंत संतोष का विषय है कि मेरे अनेक विद्यार्थि आज विभिन्न उच्च पदों पर कार्यरत हैं। उनकी सफलता में यदि मेरा थोड़ा-सा भी योगदान है, तो उसका श्रेय सबसे पहले मेरी गुरु अरुणा दीदी को जाता है।

आज गुरु पूर्णिमा के पावन अवसर पर मैं अपनी प्रिय गुरु माँ को शत-शत नमन करती हूँ। यदि कोई गुरु बनना चाहता है, तो उसे केवल विषय का ज्ञान ही नहीं, बल्कि अपने शिष्यों के व्यक्तित्व का निर्माण करने का दायित्व भी पूरी निष्ठा और समर्पण के साथ निभाना चाहिए। यही सच्ची गुरु-परंपरा है।

(C) रवि रश्मि 'अनुभूति'
मुंबई (महाराष्ट्र)

विषय : गुरु पूर्णिमा

मानव जीवन अनेक संस्मरणों से भरा होता है, किंतु माता-पिता और गुरूजनों से प्राप्त संस्कारों की स्मृतियां सबसे अमूल्य होती हैं। गुरु पूर्णिमा का पावन पर्व आते ही मुझे अपने जीवन के वे अनमोल क्षण याद आ जाते हैं, जिन्होंने मेरे व्यक्तित्व की नींव रखी।

मेरी प्रथम गुरू मेरी माता हैं। उन्होंने ही मुझे बोलता, चलना, उठना-बैठना, भोजन करना, बड़ों का आदर करना, सभी से प्रेमपूर्वक व्यवहार करना और जीवन के संस्कार सिखाए। माता ने स्नेह, अनुशासन और सदाचार का जो पाठ पढ़ाया, वही आज भी मेरे जीवन का आधार है। सच ही कहा गया है कि माता से बड़ा गुरू इस संसार में कोई नहीं।

इसके बाद मेरे शिक्षा-गुरू आए, जिन्होंने मुझे पढ़ना-लिखना, गणित के जोड़-घटाव, गुणा-भाग और जीवन के अनेक व्यावहारिक ज्ञान सिखाए। विद्यालय में गुरूजनों ने केवल पुस्तकीय शिक्षा ही नहीं दी, बल्कि सत्य, अनुशासन, परिश्रम और ईमानदारी का मार्ग भी दिखाया। उन्हीं की शिक्षा और प्रेरणा से विद्यार्थी आगे चलकर डॉक्टर, इंजीनियर, शिक्षक, नेता तथा एक आदर्श नागरिक बनता है।

आज गुरू पूर्णिमा के पावन अवसर पर मैं अपने माता-पिता एवं समस्त गुरूजनों के प्रति श्रद्धापूर्वक नमन करता हूँ। उनका दिया हुआ ज्ञान, संस्कार और आशीर्वाद ही मेरे जीवन की सबसे बड़ी पूँजी है। ईश्वर से प्रार्थना है कि उनका स्नेह और मार्गदर्शन सदैव हम सभी पर बना रहे।

स्वरचित, मौलिक संस्मरण

रेवाराम डेहरिया
गढ़ा, जबलपुर (मध्य प्रदेश)

संस्मरण

जीवन में अनेक लोग मिलते हैं, परंतु गुरु का स्थान सबसे विशिष्ट होता है। माता-पिता हमें जन्म देते हैं, किंतु गुरु हमें जीवन जीने की सही दृष्टि प्रदान करते हैं। मेरे जीवन में भी ऐसे गुरु का सान्निध्य प्राप्त हुआ, जिनकी शिक्षाओं ने मेरे व्यक्तित्व को नई दिशा दी।

मुझे आज भी वह पहला दिन याद है, जब मैं संकोच और आत्मविश्वास की कमी के साथ उनके सामने बैठी थी। उन्होंने केवल पाठयपुस्तकों का ज्ञान ही नहीं दिया, बल्कि यह भी सिखाया कि कठिन परिस्थितियों में धैर्य, अनुशासन और निरंतर परिश्रम ही सफलता की वास्तविक कुंजी हैं। उनकी एक बात आज भी मेरे मन में अंकित है— "ज्ञान का वास्तविक मूल्य तभी है, जब वह आपके व्यवहार में दिखाई दे।"

जब भी मैं किसी कठिनाई या असफलता से निराश हुई, उन्होंने मुझे गिरकर फिर उठना सिखाया। उन्होंने कभी केवल मेरी गलतियाँ नहीं गिनाई, बल्कि उन्हें सुधारने का सही मार्ग भी दिखाया। उनके स्नेह, विश्वास और मार्गदर्शन ने मुझे यह अनुभव कराया कि सच्चा गुरु वही होता है, जो अपने शिष्य की क्षमता को उससे पहले पहचान लेता है, जितना स्वयं शिष्य भी नहीं पहचान पाता।

गुरु पूर्णिमा केवल एक पर्व नहीं, बल्कि अपने गुरुजनों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का पावन अवसर है। यह दिन हमें स्मरण कराता है कि हमारे जीवन की प्रत्येक उपलब्धि में कहीं न कहीं गुरु का मौन आशीर्वाद, उनका विश्वास और उनका अथक परिश्रम समाहित होता है।

आज गुरु पूर्णिमा के इस शुभ अवसर पर मैं अपने समस्त गुरुजनों को सादर प्रणाम करती हूँ। ईश्वर से प्रार्थना है कि उनका स्नेह, आशीर्वाद और मार्गदर्शन सदैव हम सभी पर बना रहे। उनके दिखाए हुए ज्ञान, संस्कार और सत्य के मार्ग पर चलना ही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि है।

सच ही कहा गया है—

"गुरु केवल शिक्षा नहीं देते, वे जीवन को अर्थ देते हैं।
वे केवल मार्ग नहीं बताते, बल्कि स्वयं प्रकाश बनकर राह दिखाते हैं।"

ज्योति मिश्रा
कटनी (मध्य प्रदेश)

संस्मरण

सेवानिवृत्त जीवन के इस पड़ाव पर आज भी जब अंग्रेज़ी पढ़ते समय कोई कठिन शब्द मेरी आँखों के सामने आता है, तो उसके साथ ही मेरे मानस-पटल पर अपनी प्रिय शिक्षिका एस. जैकब मैडम की स्नेहमयी छवि उभर आती है।

तब स्मृतियों के पन्ने स्वतः ही पलटने लगते हैं और मन अपनी प्यारी स्कूल की छठी कक्षा में पहुँच जाता है। उन दिनों हम अन्य सभी विषय पेन से लिखते थे, किंतु अंग्रेज़ी विषय को चार लाइन वाली काँपी में पेंसिल से लिखना अनिवार्य था। उस समय अंग्रेजी की पढ़ाई छठी कक्षा से ही प्रारंभ होती थी।

जैकब मैडम बोर्ड पर चार लाइन खींचकर हमें बड़े और छोटे अंग्रेज़ी अक्षर सुंदर ढंग से लिखना सिखाती थीं। जब अक्षरों को जोड़कर पढ़ने की बारी आती, तो लगभग सभी विद्यार्थी अपना नाम आने से पहले ही घबरा जाते थे। अंग्रेज़ी विषय को लेकर हम सबके मन में एक अनजाना भय और आत्मविश्वास की कमी थी।

उस समय अधिकांश बच्चे विद्यालय की शिक्षा पर ही निर्भर रहते थे। संयुक्त परिवारों में घर के बड़े अपने कार्यों में व्यस्त रहते थे, इसलिए पढ़ाई में विशेष सहयोग नहीं मिल पाता था। हमारी प्रिय जैकब मैडम इस स्थिति को भली-भाँति समझती थीं।

उन्होंने हमें अत्यंत सरल और सहज ढंग से अंग्रेज़ी पढ़ाना प्रारंभ किया। वे हिंदी के उच्चारण से तुलना करते हुए अंग्रेजी के अक्षरों को पहचानना, जोड़ना और पढ़ना सिखाती थीं। साथ ही व्याकरण के नियमों को भी इतनी सरलता से समझातीं कि कठिन लगने वाला विषय धीरे-धीरे सहज और रुचिकर बन गया।

उनके स्नेह, धैर्य और मातृत्वपूर्ण व्यवहार ने हम सभी विद्यार्थियों के मन से अंग्रेज़ी का भय दूर कर दिया। हमारा विद्यालय बहुत बड़ा था और प्रत्येक कक्षा के अनेक अनुभाग थे। मैं स्वयं छठी 'ई' की छात्रा थी। हिंदी मेरा प्रिय विषय था, इसलिए उसकी प्रतियोगिताओं में मैं सदैव भाग लेती थी। किंतु जैकब मैडम के मार्गदर्शन से जब अंग्रेज़ी का डर समाप्त हुआ, तब मैंने अंग्रेजी विषय की प्रतियोगिताओं में भी उत्साहपूर्वक भाग लेना प्रारंभ कर दिया।

इस परिवर्तन का सम्पूर्ण श्रेय मेरी आदरणीय एस. जैकब मैडम को जाता है। उनके साथ-साथ अपने सभी गुरुजनों को मैं हृदय से कोटि-कोटि प्रणाम करती हूँ। उन्हीं की शिक्षा, प्रेरणा और संस्कारों का परिणाम है कि एक दिन मैं स्वयं भी शिक्षक बनी और उसी गौरवपूर्ण सेवा से सेवानिवृत्त हुई।

गुरु पूर्णिमा के इस पावन अवसर पर मैं अपने सभी गुरुजनों के प्रति श्रद्धा, कृतज्ञता और सम्मान अर्पित करती हूँ। उनका दिया हुआ ज्ञान और स्नेह मेरे जीवन की अमूल्य धरोहर है।

सीता गुप्ता
दुर्ग (छत्तीसगढ़)

संस्मरण

गुरुवर की गोद में पली मेरी कलम

जौनपुर की पावन साहित्यिक धरती आज भी अपने महान साहित्यकारों की सुगंध से महकती है। उन्हीं विभूतियों में एक थे साहित्यवाचस्पति डॉ. श्रीपाल सिंह 'क्षेम'— टी.डी. कॉलेज, जौनपुर के पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष, प्रख्यात गीतकार, आलोचक तथा असंख्य शिष्यों के प्रेरणास्रोत।

मेरा परम सौभाग्य रहा कि मुझे उनके 'क्षेम सदन', शेषपुरा में बार-बार आने-जाने का अवसर मिला। वह केवल एक घर नहीं, बल्कि पूर्वांचल की साहित्य-साधना का पावन तीर्थ था। वहाँ पहँचते ही आत्मीयता, विद्वता और स्नेह का अद्भुत वातावरण मन को अभिभूत कर देता था।

स्नेह का अनुपम आशीर्वाद

गुरूदेव का स्वभाव अत्यंत सरल, सहज और वात्सल्यपूर्ण था। पहली ही भेंट में ऐसा लगा मानो वर्षो का आत्मीय संबंध हो। वे मुझे कभी औपचारिकता से नहीं, बल्कि स्नेहपूर्वक "ओम प्रकाश" कहकर पुकारते थे।

जब नौकरी के सिलसिले में मैं सुदर शिलांग जाकर पूर्वोत्तर भारत में हिंदी की सेवा करने लगा, तब उनका स्नेह और भी गहरा हो गया। वे स्नेहिल स्वर में कहते—

"ओम प्रकाश, जल्दी-जल्दी मिलने आ जाया करो।
अधिक समय तक तुमसे भेंट न हो तो चिंता होने लगती है।
तुम सुदूर पूर्वोत्तर में हिंदी की सेवा कर रहे हो।"

उनके इन शब्दों में गुरू का आशीर्वाद, पिता का वात्सल्य और शिष्य के प्रति अटूट विश्वास समाहित था।

कलम को दिशा देने वाले गुरु

एक बार मैंने संकोचपूर्वक अपना गीत "होली का त्योहार" उन्हें सुनाया। उन्होंने बड़े मनोयोग से उसे पढ़ा, कुछ शब्दों और पंक्तियों में आवश्अक संशोधन किए तथा उसी समय अपने हस्ताक्षरों सहित संपादक के नाम अनुशंसा-पत्र लिख दिया।

परिणामस्वरूप वह गीत प्रकाशित हुआ और पत्रिका की एक प्रति डाक से मेरे पास भी पहुँची। वह प्रति आज भी मेरे लिए केवल एक प्रकाशन नहीं, बल्कि गुरु-कृपा और आशीर्वाद की अमूल्य धरोहर है।

विश्वास का अमूल्य प्रमाण

जीवन का एक कठिन क्षण तब आया, जब मेरे ललित निबंध-संग्रह "कदंब" की पांडुलिपि कहीं खो गई। मैं अत्यंत निराश था। उस समय गुरुदेव ने मुझे एक हस्तलिखित अनुशंसा-पत्र दिया, जिसमें उन्होंने मेरे साहित्यिक प्रयासों पर अपना अटूट विश्वास व्यक्त किया। उन्होंने लिखा कि मैं पुनः उसी कृति का सृजन करने में सक्षम हूँ और भविष्य में हिंदी साहित्य को महत्त्वपूर्ण योगदान दूँगा।

उनका वह पत्र मेरे लिए किसी सम्मान या पुरस्कार से कहीं अधिक मूल्यवान है। उसमें एक गुरु का विश्वास, एक पिता का स्नेह और एक साहित्यकार का आशीर्वाद समाहित है।

आज भी जीवित हैं गुरुदेव

यद्यपि गुरुदेव आज हमारे बीच नहीं हैं, किंतु उनकी वाणी, उनकी शिक्षाएँ और उनकी रचनाएँ— "नीलम तरी", "संधर्ष तरी" तथा "एक पल ही जियो, फूल बनकर जियो"— आज भी हमें प्रेरणा देती हैं।

आज भी जब मैं शिलांग की वादियों में बैठकर हिंदी का अध्यापन करता हूँ, तो ऐसा अनुभव होता है मानो गुरुदेव की वही स्नेहिल आवाज़ कानों में गुँज रही हो—

"ओम प्रकाश, जल्दी-जल्दी मिलने आ जाया करो।"

मैं आज उनके पास भले ही न पहुँच सकूँ, पर उनकी दी हुई हिंदी-सेवा की साधना को प्रत्येक कक्षा, प्रत्येक मंच और प्रत्येक रचना के माध्यम से आगे बढ़ाने का प्रयास करता हूँ। यही मेरे गुरुवर के प्रति मेरी सच्ची श्रद्धांजलि और विनम्र गुरु-दक्षिणा है।

गुरु पूर्णिमा के पावन अवसर पर अपने पूज्य गुरुवर साहित्यवाचस्पति डॉ. श्रीपाल सिंह 'क्षेम' को शत्-शत् नमन।

— डॉ. ओम प्रकाश मिश्र 'मधुब्रत'

कोट से मिली अनमोल सीख

विद्यालय के दिनों की एक घटना आज भी स्मृतियों में उतनी ही ताजा है। उन दिनों विद्यालय में निर्धारित ब्लेज़र पहनना अनिवार्य था। संयोग से घर में मेरे लिए एक नया, सुंदर और रंगीन कोट आया। मन में विचार आया कि आज वही पहनकर विद्यालय चलती हूँ। लगा कि इतनी बारीकी से जाँच तो होती नहीं है, इसलिए शायद किसी का ध्यान भी नहीं जाएगा।

लेकिन उस दिन प्रार्थना सभा के समय ही यूनिफ़ॉर्म की जाँच शुरू हो गई। मेरी बारी आई तो गुरूजी की दृष्टि सीधे मेरे कोट पर गई। उन्होंनें मुस्कुराते हुए पूछा, “ब्लेजर कहाँ है? नया कोट पहनकर क्यों आई हो?”

उस क्षण मेरे पास कोई संतोषजनक उत्तर नहीं था। मैं संकोच से सिर झुकाकर खड़ी रही। गुरूजी चाहते तो सबके सामने डाँट सकते थे, पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। केवल इतना कहा, “आज तो जाने देते हैं, लेकिन याद रखना—विद्यालय की पहचान है। अनुशासन का अर्थ है नियमों का सम्मान करना, अपनी पसंद का नहीं।”

मैंने धीरे से कहा, “सर, आज ठंड ज़्यादा थी।” वे मुस्कुराए और बोले, “ठंड से बचने के लिए ब्लेजर के अंदर स्वेटर पहन सकती थीं, लेकिन दूसरा कोट पहनना उचित नहीं है।”

उनकी यह बात उस दिन तो एक साधारण समझाइश लगी, पर समय के साथ समझ आया कि अनुशासन छोटे-छोटे नियमों से ही जीवन का बड़ा चरित्र गढ़ता है। गुरूजी ने उस दिन डाँटकर नहीं, बल्कि स्नेहपूर्वक समझाकर अनुशासन का जो पाठ पढ़ाया, वह आज भी मेरे जीवन की अमूल्य सीख बना हुआ है।

छाया सक्सेना प्रभु
जबलपुर (म.प्र.)

संस्मरण

एक बार की बात है। शाला में किसी बड़े अधिकारी का निरीक्षण हुआ। हम बच्चे प्राथमिक कक्षा में पढ़ते थे। परीक्षा का समय था। लकड़ी के बोर्ड में पढ़ाई होती थी। जिसमे कई छेद हो जाते थे। खड़ी लाईनें पड़ जाती थीं। उस पर सवाल हल किये जाते थे। कविता व प्रश्नोत्तर लिखे जाते थे। एक मेडम बहुत मरती भी थी।

उस समय गुरू की डांट मार को कोई गंभीरता से नहीं लेता था। मार दिया तो मार दिया। माता पिता भी कहते कि तुमने ही गलती की होगी। माता पिता भी गलती होने पर डंडे से मरते थे। उद्दंडता नहीं थी। अनुशासन रहता था। आज की तरह शिकायत लेकर कोई शाला नहीं जाता था। गुरूजी का बहुत आदर सम्मान होता था।

तो अधिकारी महोदय शाला में आये। बोर्ड पर मेडम पेपर लिख रही थीं। केवल प्रश्न प्रश्न। बच्चों को बोला कि आप उत्तर लिखते जाएं। जल्दी जल्दी मिटा भी देती थीं। वैसे मेरी स्पीड अधिक थी। उनके मिटाने के पहले ही मैं लिख लिया करती थी। पर उस दिन मेडम ने जल्दी मिटा दिया। मेरे दो सवाल छूट गए। गणित में चार नम्बर का सवाल छूट गया। मुझे दुख हो रहा था। किसी की हिम्मत नहीं थी कि बोल दे। या मेडम पुनः लिख दें।

मैंने हिम्मत करके मेडम से कहा, "मेडम चार अंक वाला प्रश्न लिख नहीं पाई। यदि बोल दें तो मैं लिख लुंगी।" पर मेडम सुन ही नहीं रही थी। ठीक उसी समय बड़े अधिकारी साहब का आना हुआ। मुझे निराश देखकर वो शायद समझ गए। उन्होंने मेरी कॉपी देखी और दंग रह गए। बोले, "अरे तुम्हारे तो सभी सवाल सही हैं। बस चार नम्बर का सवाल तुमने नहीं लिखा।" मैंने बताया, "मेडम ने मिटा दिया था इसलिए नहीं लिख पाई।" तब बड़े साहब ने हमारी मेडम को समझाया, "बच्चे छोटे हैं। थोड़ा देर से मिटाया कीजिए जिससे बच्चे लिख लें।" हिदायत देकर साहब तो चले गए। पर मेडम को सवाल नहीं लिखना था तो आखिर नहीं लिखा।

लेकिन उस दिन मैंने एक बात जरूर सीखी। जितनी जल्दी से जल्दी लिख सको, लिखो। तब से मैं जल्दी लिखना सीख गई। कक्षा में सबसे पहले लिखने लगी। जितने में अन्य लड़कियां लिखतीं, मैं लिखकर सबसे पहले हाथ उठा देती।

डॉ. अर्चना तिवारी स्मृति

नर्मदापुरम

गुरू पूर्णिमा

संस्मरण

मुझे याद हैं मैं आसाराम बापू से दीक्षा लेने को बहुत उत्साहित थी।

मैंने निर्णय लिया कि मुझे आसाराम बापू को ही गुरू बनाना है। तभी मुझे एक सज्जन मिले मैंने उनसे कहा मुझे आसाराम बापू जी से दीक्षा लेनी है वो कैसे मिलेंगे। तब वो बोले आप आसाराम बापू को छोड़िये ईश्वर से बड़ा गुरू कोई नहीं होता आप ईश्वर के सानिध्य में रहिये आपका मंगल होगा। वैसे स्त्री का सर्वस्व उसका पति ही होता हैं। आप अपने कर्तव्य पालन में निष्छा रखिये सब मंगल होगा।

मैं कई दिनों तक सोचती रही क्या करूँ, फिर मैंने भगवान श्रीकृष्ण को ही गुरू मान कर एक मंत्र चुन लिया और उसका जाप करने लगी। गीता भगवान श्रीकृष्ण की वाणी है इस लिये गीता का अध्ययन करने लगी। सतः ही मेरे मन की कालिमा हटने लगी और मै स्वाध्याय में रमने लगी।

मैंने अपने जीवन में बहुत उतार-चढ़ाव देखे हैं सहे हैं पर कान्हा जी की कृपा से कभी अपने पथ से विचलित नहीं हुई। हर दुख में, हर संकट में, मान अपमान में शांत होकर डटे रहने की ताकत मुझे मेरे स्वाध्याय से ही मिली है। हमें गुरू को बाहर ढूंढने की बजाय अपने अंतर मन में टटोलना चाहिए। आपकी अंतरात्मा ही आपकी गुरू है वही आप का उद्धार कर सकती हैं।

मुझे मेरी बहू कहती है मम्मी घर में इतनी परेशानी है इसमें आप खुश कैसे रह सकती है, आपको परिवार की थोड़ी भी चिंता नही होती क्या। इस उलाहने पर भी मैं मुस्कुरा कर रह जाती हूँ।

डॉ इन्दु शर्मा शचि
तिनसुकिया असम

गुरु

'आबिद'

(संस्मरण)

स्कूल में नए सत्र का पहला दिन था। आज मुझे नई कक्षा के बच्चों से मिलने की काफी उत्सुकता हो रही थी। शिक्षण क्षेत्र में ये मेरे शुरूआती दिन थे। मैं पहली कक्षा की कक्षाध्यापिका नियुक्त हुई थी। उचित समय पर प्रार्थना सभा आयोजित हुई। ईश वंदन के बाद सभी बच्चे अपनी कक्षा में गए। तदुपरांत कक्षा में मेरा पदार्पण हुआ। सभी बच्चों ने खड़े होकर मेरा अभिवादन किया। मैंने भी प्रतिक्रिया स्वरूप अभिवादन स्वीकार किया तथा बच्चों को यथास्थान बैठने का निर्देश दिया। अपना परिचय देने के बाद मैंने बच्चों से परिचय करने के लिए उनसे बातें करने लगी। सबसे पहले मैंने जिस बच्चे को खड़ा किया वह एक पतला-दुबला सा लड़का था जो अगली बेंच पर किनारे ही बैठा था। देखने से वह बिल्कूल सीधा-सादा और थोड़ा डरा-सहमा सा लगा। मैंने जब उससे उसका नाम पूछा तो उसने धीमी आवाज़ में लेकिन पूरे आत्मविश्वास के साथ अपना नाम बताया- "आबिद हुसैन"। कहकर उसने अपने होठों पर मीठी-सी मुस्कान बिखेरी लेकिन तत्क्षण उन्हें समेटने की कोशिश करने लगा। यही वो क्षण था जो छायाचित्र की तरह मेरी यादों के अलबम में हमेशा के लिए अंकित हो गया।

आबिद पढ़ाई में बहुत अच्छा था इसलिए वह बाकी शिक्षिकाओं का भी चहेता था। वह बहुत ही समझदार और आज्ञाकारी छात्र था। पहली कक्षा से ही वह प्रथम स्थान का दावेदार रहता था। उसकी कॉपी इतनी साफ -सुथरी होती थी कि सही करने के लिए भी लाल कलम चलाने में झिझक होती थी। पढ़ाई के अलावा वह काफी व्यवहारकुशल भी था। शिक्षकों के लिए स्नेह का पात्र तो था ही अपने सहपाठियों का सच्चा दोस्त भी था। जिस दिन किसी को आबिद की कॉपी मिल जाय उस दिन वह स्वयं को विजेता महसूस करता था।

सिर्फ आबिद ही नहीं, बल्कि उसके माता- पिता का भी बच्चों की पढ़ाई के लिए जो समर्पण था वह प्रशंसनीय था। विकट परिस्थितियों में भी वे बच्चों की शिक्षा के प्रति समर्पित रहते थे। पिछले दस वर्षो में कितने बच्चे आए-गए परन्तु आबिद की छवि विद्यालय में सूर्य की भांति प्रकाशमान रही।

आज दसवीं का रिज़ल्ट आया। आज आबिद फिर अव्वल रहा। सुनकरकर मन गदगद हो गया। बाकी सभी बच्चों ने अच्छे नम्बर लाए। सचमुमुच जब बच्चों का रिज़ल्ट आता है न, अपनी करनी पर बड़ा गर्व होता है। आज फिर से दसवीं कक्षा के विदाई समारोह के वो दिन याद आ रहे हैं जब दसवीं के सभी बच्चे अपनी मोबाईल से शिक्षिकाओं के साथ सेल्फी ले रहे थे और विद्यालय में बिताए पलों को सहेजने की कोशिश कर रहे थे। उस दिन मेरा मन कुछ ज़्यादा ही भावुक हो रहा था। आँखें तो सभी की डबडबा गई थीं।

खैर, बच्चे तो बहती धारा की तरह हैं, आते रहेंगे, जाते रहेंगे और हम शिक्षक दो किनारे जिसपर वे अपनी पहचान छोड़ जाएंगे । एक बार फिर मेरे मन के आँगन में ख़ुशियाँ बिखेरने वाले आबिद एवं सभी छात्रों को बहुत बहुत बधाई एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए शुभकामनाएँ ।

पूनम वर्मा
राँची, झारखण्ड !

संस्मरण

गुरु पूर्णिमा की पावन तिथि बचन से लेकर आज तक मुझे गुरु के आदर्शों और मार्गदर्शन को याद दिलाता है। विद्यालय के प्रथम दिन हाथों में पेंसिल से स्लेट पर अ,आ का अभ्यास मन को रोमांचित कर देता है। विद्यालय के प्रधान शिक्षक स्वतंत्र कुमार पाण्डेय जी को मेरे पावन हृदय में आज भी विराजमान हैं। मेरे जीवन में माताजी का सराहनीय मार्गदर्शन गुरु शिक्षा से कम नहीं था। मेरे माता जी का अंगली पकड़कर चलने के साथ - साथ उपदेश की बातें जीवन को सुखमय और संस्कारवान बनाई है। गुरु के असीम कृपा से ही साहित्य के प्रति रुचि और सृजन अभ्यास पाया है।

साल भर तक इस पावन तिथि का बेसब्री से इंतजार रहता है। गुरु पूर्णिमा के दिन स्नान करके अपने गुरुवों को प्रणाम करके असीम आनंद प्राप्त होता है।

अप्रकाशित और स्वरचित संस्मरण लेखान प्रस्तुति।

गौतम सिंह " अनजान"
पश्चिम मिदनापुर, पश्चिम बंगाल

तस्मै श्री गुरुवे नमः

गुरु पूर्णिमा के पावन अवसर पर अपने वंदनीय गुरुदेव,
आचार्य श्री बाबूराम द्विवेदी जी को कोटि-कोटि नमन।

यद्यपि एक दीर्घ अंतराल के बाद जीवन में ऐसा क्षण आया है कि मैं अपने गुरुदेव को नमन तो कर सकती हूँ, परंतु उनके आशीर्वचन केवल अनुभव कर सकती हूँ, उन्हें अपने कानों से सुन नहीं सकती; क्योंकि मेरे गुरुदेव परमपिता परमात्मा के श्रीचरणों में स्थान प्राप्त कर चुके हैं।

जब मैं मात्र दस वर्ष की थी, तब से लेकर 2 जून 2026 तक मुझे गुरुदेव का स्नेह, संरक्षण और आशीर्वाद जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में निरंतर प्राप्त होता रहा। वे सूक्तियों और सुभाषितों के माध्यम से जीवन-मूल्यों की ऐसी अनुपम शिक्षा प्रदान करते थे कि अल्पबुद्धि छात्र-छात्राओं के हृदय में भी अध्ययन के प्रति रुचि जागृत हो जाती, माता-पिता के प्रति श्रद्धा का भाव उत्पन्न होता तथा समस्त प्राणिमात्र के प्रति करुणा और संवेदना विकसित होती।

चाहे वर्तनी की शुद्धता का विषय हो, संस्कृत व्याकरण के सूत्र हों अथवा जीवन का व्यावहारिक ज्ञान—प्रत्येक क्षेत्र में उनका मार्गदर्शन मुझे निरंतर प्राप्त होता रहा। आज मैं जो कुछ भी हूँ, वह अपने पूज्य गुरुदेव की प्रेरणा, प्रोत्साहन और स्नेह का ही प्रतिफल है।

यद्यपि मेरे गुरुदेव आज भौतिक रूप से हमारे बीच नहीं हैं, तथापि उनकी दी हुई शिक्षा, उनके आदर्श, उनके प्रेरणाप्रद वचन, उनका स्नेह और उनका अमूल्य आशीर्वाद आज भी प्रत्येक क्षण मेरे साथ हैं और जीवन-पथ पर मेरा मार्ग आलोकित कर रहे हैं।



सरोज शुक्ला "श्री"
राष्ट्रीय सह-अध्यक्षा

संस्मरण (गुरु पूर्णिमा पर)

उत्तरार्द्ध काल के समय अब ,जब मैं अपने अतीत में झांकता हूँ, तो अनेकानेक चलजित्र आँखों के समक्ष लहराने लगते हैं ,लगता है मूलतः आदमी एक अंधेरा है ,गहरे अंधेरे के जाल में फँसा हुआ आज का आदमी स्वयं अंधेरे में परिवर्तित हो गया है ! अज्ञानतावश व्यक्ति उजाले की तलाश में अंधेरे को मिटाने की कोशिश करने लगता है...पर क्या अंधेरा भी मिटेगा ?वह इस शाश्वत सत्य को नजरअंदाज कर लेता है कि अंधेरा मिटता नहीं, स्वयं को अंधेरे से बाहर निकालना पड़ता है! गहन अमावस की रात को बाहरी दीपकों से मिटाया नहीं जा सकता ! कैसे मिटाओगे, इतना सामर्थ्य लाओगे कहां से ? इस अंधेरे से बाहर निकालने में मदद मिलेगी केवल सदगुरु की कृपा से !

मुझे जुलाई १९९० के दिन याद आ रहे हैं ,जब मैं व्याख्याता हिंदी के पद पर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय बाली ,पाली मारवाड़ में पदोन्नति पर स्थानांतरित होकर गया था ! वहां मेरी मित्रता आदरणीय चंदन जी गर्ग (सिंचाई विभाग के बाबु जी) से हुई ! वे बड़े धार्मिक प्रवृत्ति के और सदाचारी व्यक्ति थे और मुझसे काफी स्नेह रखते थे ! उनके पावन संसर्ग का परिणाम था कि मुझे सच्चे सदगुरु की कृपा दृष्टि प्राप्त हुई!उन दिनों तक तक मुझे कोई सच्चा गुरु नहीं मिला था अनेकानेक जगह तलाश किया पर कहीं पर सच्चे गुरु का साक्षात्कार संभव नहीं हो पाया ! वे एक दिन मुझे पावन गुरु देव स्वामी माधवानंद पुरी जी के आश्रम , निपल (पाली , राजस्थान) ले गए ! गुरुजी अपने वचनों से भक्त जनों को संबोधित कर रहे थे हम लोग सब के पीछे वाली पंक्ति में बैठ गए !उनकी मधुर वाणी सारे वातावरण को सम्मोहित कर रही थी! मेरे कानों में उनकी आवाज के स्वर उद्वेलित करने लगे "जीवन निश्चित रुप से रुपांतरित होगा! केवल थोड़ी सी आपकी तैयारी होनी चाहिए ,आप मुझे सुन रहे हैं निश्चित और एकाग्रता से,मन से यदि सुन पाओ ,... सिर्फ पास मत बैठना कि केवल सत्संग हो जाए ! भीतर का कपाट तनिक खोलने का प्रयास करना , भीतरी दीया जलाने की कोशिश करना, जैसे ही आपका भीतरी दीया जल जाएगा वैसे ही आप मेरे करीब आ जाओगे !बुझे दिए भी छलांग लगाकर जलते हुए दीऐं की ज्योति ले सकते हैं !" " मुझे लगा मैं किसी विचित्र दुनिया में प्रवेश कर गया हूँ ,जहां केवल शांति है मधुरता है और भीतर के दीए की दिव्य रश्मियां !

अब मैं हर रविवार व अवकाश के दिन आश्रम निपल अवश्य जाया करता था ! एक दिन गुरु देव की मुझे अकिंचन पर कृपा दृष्टि हुई! आज सायं तुम मुझे चंदन के साथ मिलो ! गुरु देव के अमृत वचन सुनकर मैं निहाल हो गया , मैंने हां में सिर झुकाया और चरण वंदना करने लगा, मेरा कंठ आसकी के अतिरेक से भर गया , मैं कुछ बोल भी नहीं पाया! शाम को गुरु जी से साक्षात्कार हुआ ! उनका आशीर्वाद मिला, और उनकी अमुत वाणी से मेरी युगों की ज्ञान पिपासा शांत हुई!

गुरु देव जीवन के उत्तरार्द्ध काल में थे ! उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था ! एक दिन की बात है की गुरु जी सादड़ी पधारे थे ! एक धर्मशाला में रुके हुए थे प्रवचन के बाद चंदन जी उनके पास गए तो उनके शरीर में काफी थकावट और बलगम की शिकायत थी ! हम दोनों ने रात भर उनकी सेवा की ! सहेरे गुरुजी ने स्नेहासिक्त होकर आशीर्वाद दिया! उनसे आज्ञा मिलने पर हम दोनों अपनी ड्यूटी पर आए!

गुरु जी का मेरे प्रति पुत्रवत स्नेह रहा , कभी जब राजकीय कार्य से व्यस्त होने के कारण या अन्य अपरिहार्य कारणों से आश्रम नहीं जा पाता था ,तो गुरुजी कहा करते थे कि " तुम आया करो... समय निकाल कर आया करो ! ... मैं जानता हूँ ...तुम्हारा मन ध्यान में लग रहा है , हालाँकि तुम्हें यह अनुभव सांकेतिक हो रहा है पर ... अवसर आएगा, जरुर अवसर आएगा, ध्यान गहराएगा, तुम्हारा मन एक पारे की तरह है ध्यान तुम्हें छूने लगता है ,पर मन से चिपकता नहीं... इसे और साधो ... और साधो , नए-नए द्वार खुलेंगे ,नए-नए साक्षात्कार होंगे !

गुरु देव का अपने गुरु जी के प्रति समर्पण और निस्वार्थ प्रेम उनके द्वारा रचित ग्रंथ लीला अमृत में प्रखरता से दृष्टिव्य है ! आपके द्वारा रचित ९ पुस्तकें आज भी मेरे पास उपलब्ध है ,वे पुस्तकें मेरे लिुए सम्माननीय व प्रेरणाप्रद है! पार्थिव देह पंचतत्व में विलीन होने के उपरांत भी गुरु जी की अमुत वाणी से आप्लावित हूँ !

गुरु देव महा मंडलेश्वर स्वामी महेश्वरानंद पुरी जी आपके शिष्य हैं ,जिनके चरणों को छूने का सौभान्य मुझे मिल जाता हैं! आपके लाखो अनुयाई विदेशी हैं ! आपके द्वारा बनवाया गया पाली शहर (राजस्थान) के नजदीकी कस्बे जाडन में ॐ आकार का विश्व का पहला आश्रम लगभग ५०० एकड़ में फैला हुआ है! गुरु देव स्वामी माधवानंद पुरी जी का समाधि स्थल आश्रम के मध्य स्थित है !

गुरुदेव स्वामी माधवानंद पुरी जी मेरे लिए रश्मि पुंज है उनके स्मरण मात्र से मेरे भीतर अतुलनीय आनंद का स्त्रोत और ऊर्जा की अनुभूति का अहसास होता है ऐसा आनंद वहीं अनुभूत कर सकता है जो गुरु के प्रति समर्पित हो !

डॉ. छगन लाल गर्ग 'विज्ञ' !
२ डी ७८ , राजस्थान हाऊसिंग बोर्ड आकरा भट्टा ,
आबूरोड (सिरोही)

गुरू पूर्णिमा (संस्मरण)

"गुरू गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूं पांय? बलिहारी गुरू आपने, गोविंद दियो बताय।।" यही दोहा पढ़ते-पढ़ते हम बढ़े हुए, न जाने कितनी बार इसे लिखा और दोहराया लेकिन इसका वास्तविक अर्थ तो तब पता चला जब इसे अपने जीवन अनुभव किया। न जाने हम कितनी बार अज्ञानतावश बातों को गलत तरीके से ले लेते हैं। ऐसा ही मेरे साथ हुआ था जब मैं कक्षा तीसरी में पढ़ती थी।

बचपन से अपने घर के बड़ों को पूज़ा पाठ करते देखती थी और सोचती थी कि यदि मैंने भी जोरों से घंटी बजाती, और जोर-जोर से मंत्र पढ़ें तो मेरी सारी मनोकामनाएं पूर्ण हो जाएगी और मनचाही चीजें प्राप्त होंगी। एक बार मैं खूब पूज़ा-पाठ करके, ईश्वर से अपने चित्रकारी के विजयी होने की प्रार्थना करके स्कूल गई और स्पर्धा में भाग लिया इस विश्वास के साथ कि मुझे इनाम मिलेगा। जब परिणामों की घोषणा हुई तब मेरी चित्रकारी को चाथा स्थान मिला। मैं उदास होकर घर गयी और रोने लगी। जब माँ ने पूछा तो मैंने बताया कि भगवान ने मेरी बिल्कुल मदद नहीं की वरना मेरी कृति पहले नं पर आती। मैंने कितनी घंटी बजाई थी और जोर-जोर से मंत्र भी पढ़ें थे जिससे वे मेरी बात सुनें। माँ हंसी और बोली- और आपको कैसे पता भगवान ने आपकी बात नहीं सुनी?
हो सकता है सुनी हो और आपको पता न चला हो। तब मैंने कहा- यदि सुनी होती तो मैं वेजयी होता न।

तब उन्होंने समझाया हमारी इच्छाएं सागर जैसी है - अगाध, रहस्यमय और खतरनाक भी यदि हमने सही मांझी, सही नाव सही, दिशा का चयन किया और उसपर धैर्य के साथ पूरी मेहनत की, तभी सफलता का मोती हमें प्राप्त होगा, वरना हमें मांझी, नाव, दिशा, बदलना चाहिए और मेहनत और धैर्य पर भी कार्य करना चाहिए और जब तक हम धैर्यपूर्ण और सार्थक प्रयास करना नहीं सीखते तब तक भगवान हमें बार-बार ऐसी परिस्थितियों में डालते हैं जिनमें से हम तब तक नहीं निकल सकते जब तक पूरी तरह तैयार न हो जाएं। इसलिए हमें कभी-कभी लक्ष्य से पहले रूकावटें इसलिए आती हैं जिससे हम परिपक्व हो कर लक्ष्य तक पहुँचे, तभी उसे सागर के हर पहलू का अनुभव होगा। कच्चे फल समय से पहले न तो खाएं जा सकते हैं न ही बीज दे सकते हैं इसलिए हमें धैर्य रखने की जरूरत है और जोर-जोर से घंटी बजाने और जोर-जोर से मंत्र जपने से नहीं, अपितु मन में सद्भावना, शांति और प्रेम से पुकारने से भगवान खुश होते हैं।

तब मुझे पता चला कि हमें भगवान से मिलाने वाले भगवान नहीं, बल्कि विभिन्न स्वरूपों में हमारे मात-पिता, शिक्षक, सहोदर, मित्र या किसी अन्य रूप में आए लोग या अनुभव होते हैं जो हमारे जीवन में गुरू की भूमिला निभाते हैं और हमें भगवान का सही अर्थ समझाते है। उस दिन माँ ने ही पूर्णिमा के चांदनी के भांत्ति मेरे मन के तिमिर को शून्य कर दिया था। उस दिन माँ के रूप में मेरा मेरे गुरू से साक्षात्कार हुआ था और उनकी दी हुई सीख आज भी मेरा मार्गदर्शन कर रही हैं।



नंदिता माजी शर्मा
मुंबई

गुरु पूर्णिमा पर श्रद्धासुमन

गुरू पूर्णिमा के पावन पर्व पर अपने पूज्य स्वर्गीय पिताजी डॉ. भोला नाथ श्रीवास्तव जी, स्वर्गीय मामाजी द्विजेन्द्र नाथ श्रीवास्तव जी तथा स्वर्गीय मौसाजी हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव जी को कोटिशः नमन एवं श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ।

पिताजी का सान्निध्य मुझे केवल बारह वर्ष की आयु तक ही प्राप्त हो सका, किंतु इस अल्प समय में उन्होंने मुझे जीवन जीने के ऐसे सिद्धांत, मूल्य और गूढ़ रहस्य सिखाए, जो आज भी मेरे प्रत्येक कदम का मार्गदर्शन करते हैं। उनका स्नेह, संस्कार और शिक्षा मेरे जीवन की सबसे अमूल्य धरोहर हैं।

पिताजी के मात्र 35 वर्ष की अल्पायु में शिवलोक गमन के पश्चात् मेरे परम पूज्य मामाजी और मौसाजी ने अभिभावक एवं गुरू के रूप में मेरा मार्गदर्शन किया।

मेरे मामाजी एक उत्कृष्ट पहलवान थे। वे कहा करते थे—

> *"बिना चोट सहे कोई पहलवान नहीं बनता। यदि मैं चोट खाने से डर जाता, तो अखाड़े का चैंपियन कभी नहीं बन पाता। इसलिए जीवन में संघर्षों और आघातों से मत घबराओ। उन्हें स्वीकार करो, स्वयं को मजबूत बनाओ और साहस व सामर्थ्य के साथ जीवन जियो।"*

मेरे मौसाजी एक प्रतिष्ठित उद्योगपति एवं मिल मालिक थे। उनका जीवन-दर्शन आज भी मेरे लिए प्रेरणास्रोत है। वे कहते थे—

> *"लोग तुम्हारे साथ जैसा व्यवहार करें, वैसा व्यवहार तुम उनके साथ कभी मत करना। उनका व्यवहार उनके संस्कारों का परिचय देता है, जबकि तुम्हारे संस्कार तुम्हारे पिताजी की अमूल्य देन हैं। उन्हें किसी भी परिस्थिति में मत खोना। यदि कोई तुम्हारी सौ रूपये की सहायता करे, तो अवसर मिलने पर उसकी सहायता दोगुनी करके लौटाना, ताकि तुम्हारी विश्वसनीयता और सम्मान सदैव बना रहे। अपने हाथ कभी किसी की बुराई करके गंदे मत करना, क्योंकि इन्हीं हाथों में भाग्य की रेखाएँ भी होती हैं। सदैव सौभाग्यशाली बनने का प्रयास करना।"*

आज पिताजी, मामाजी और मौसाजी तीनों ही इस संसार में नहीं हैं, किंतु उनके दिए हुए संस्कार, आदर्श और जीवन-मूल्य मेरे लिए सदैव जीवंत हैं। मैं आजीवन उनके दिखाए हुए मार्ग पर चलने के लिए दृढ़ संकल्पित हूँ।

ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि प्रत्येक जन्म में मुझे यही महान आत्माएँ गुरू, अभिभावक और पथप्रदर्शक के रूप में प्राप्त हों। यही मेरी सच्ची श्रद्धांजलि और विनम्र कामना है।

— डॉ. ऐश्वर्या सिन्हा चित्रांश

गुरू पूर्णिमा विशेषांक ◆ साहित्य संगम संस्थान

साहित्य संगम संस्थान

नियमावली:-

सदस्य मार्गदर्शिका एवं पटल नियम (११वे साल के १२ शुभ बिंदु)

1 यह मंच विश्द्रुद साहित्यिक सेवा के लिए है; सभी रचनाकारों, सम्माननीय, रजतितिक या धार्मिक विचारों से स्वरंच्र रहकर स्वाएं भेजें जो सदस्य किसी अन्य सदस्य के व्यक्तिगत ई-सस्जि (WhatsApp) या फोन, पर **"सदय प्रेमा"** या **"गुरू प्रेसिर्का"** जैसे संदेश नहीं भेजेंगे। अभि-आवश्यक कार्य होने पर ही प्रशांन्मीक संपर्क की अनुमति है।

2 **साहित्य संगम संस्थान केबल साहित्यिक साधना मंच मंच है।** पटल पर किसी भी प्रकार का विज्ञापन, चाहरी सरकारी हो प्रचार पोस्ट, व्यावसाथिक लिंक या व्यामारीक संदेश सख्त रूपन मुर्वाह: भर्मित है।

3 सभी रचनाकार अपनी ह्निमिक प्रविस्थिवों केश्ने और बेहतर निर्माणि के लिय पटल पर आगे कर्मेंट बॉक्स में ही पोस्ट करेंगे। पटल पर सीधे ल्मिकंर पोस्ट (Approval) की अनुमति नहीं होगी।

4 पटल पर प्रेषित की जाने वाली सभी रचनाएं पूर्णत: मौलिक, स्वर्तोखित और अप्रकाभित होनी चाहिए। किसी भी प्रकार की साहित्यिक चोरी (Plagiarism) या दुसरे की रचना को अपने नाम से पोस्ट करना पुर्णत: प्रतिबंधित है।

5 **अंग्रेजी भाषी बोलने के रचनाकार अपनी मुल भाथा (हिंदी) मंरमा में लिखकर अनुनो साथ दे, अन्यं ह्रोदा अप्रीषित हिंदी अनुवाद** भी अनिवार्य रूप से पोस्ट करेंगे, और कोई भी सदस्य अपनी रचना को ह्रेभिम्न ही भीधवी में अन्य भाथा में ए.ज्ञातें. है। अनुवाद स्करो पटल के नियमों, शलर्व व भाषा के अनुरूप सोवद कर दिखाएं है।

6 प्रत्येक रचनाकार को प्रतिदिन स्वयं या प्रशधिकारियों द्वारा भेजे गए एक रचनात्मक साहित्य का नियमित करना अनिवार्य है।

7 पटल के प्रत्येक सदस्य को सप्ताह में कम से कम एक दिन पुटल मंच पर लाग्त मे अपनी सक्रिय उपस्थिति दर्ज कराना आवश्यक है।

8 पटल पर अपनी 1 रचना पोस्ट करने के साथ-साथ सभी रचनाकारों की कम से कम 5 रचनाओं पर समीक्षात्मक टिपणी (गुण-दोथ सहित) देनी होगी। केबल रचना पोस्ट कर सीधे सम्पानय संगमे चलों को मंच से पूथक कर दिया जाएगा।

9 सदस्य सुबह जब से उसी प्रव्रेश की इकाई का वैध सदस्य माना जाएगा जहों का वय नियमति है और वहों का सदस्य पहचान पत्र है। दुसरे प्रव्रेश के रचनाकार को अन्य प्रतीने पटलों पर एक निश्चित समय के लिए 'अतिथि साहित्यकार" के रुप में चुककर साहित्यिक सेवा की अनुमति होगी।

10 किसी भी सदस्य को यह अधिकार नहीं है कि वह पटल पर किसी व्यस्कि विचेथ या संस्थान की व्यतियो ह्रास्त्ग अ्मो को किसी को टव्याग्रना दे। जहों भी ऐंसी या अमथ्य माघा आप, सदस्य अपनी व्यर्तातक्तगाते और सुव्रसुक ने उसे स्वयं दुर प्रटने कर अपना सदेस्य। प्रतयत आवश्यकता पड़ेगी भा साहित्यिवरिज्ञों की व्यक्तिगत रूप से मर्यादित संपर्क स्थापित करेंगो।

11 पटल पर किसी भी प्रकार का विवाद, चट्ना या तर्क-वितर्क फैलाने वाले व्यकि को बिना किसी पूर्व चेतावनीं के सस्ते जांलो पल से तत्काल पूथक/ब्लॉक किया जाएगा।

सबका प्रयास: सबका विश्वास : सबका विकास